UNIVERSAL LIBRARY
OU_178792
UNIVERSAL LIBRARY

डोलती नाव

(उपन्यास)

लेखक :
यशोविमलानन्द

१९५१

प्रकाशक
सीता-प्रकाशन
जनरलगंज, कानपुर ।

मुद्रक :
सुधा प्रेस, कानपुर ।

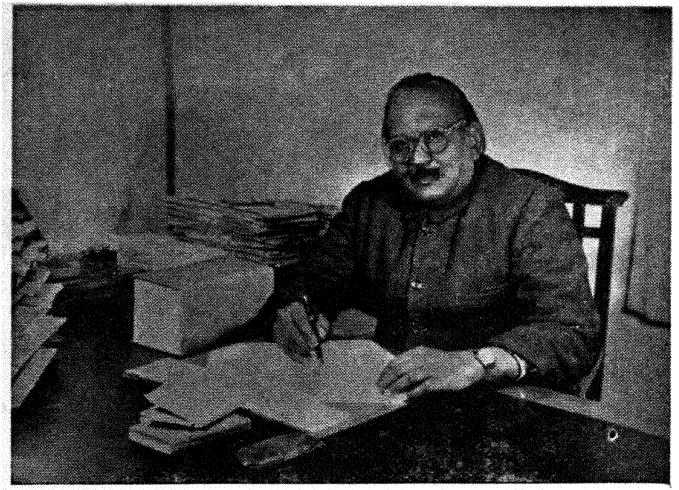

माननीय डाक्टर सम्पूर्णानन्द

उन्हीं

बड़े बाबू जी को

जिनके त्याग की कहानी सदैव अमर रहेगी,

जिनका चरित्र और हृदय आकाश-गंगा सा उज्ज्वल है,

जिन्होंने सुख की छांव न पाकर भी कभी दुःख का अनुभव नहीं किया।

सादर—

भोले

एक

जब हिमालय अपने पिता की अन्त्येष्टि कर शिव-भूमि से वापस लौटा, उसने अनुभव किया—'अब उसका संसार में कोई भी नहीं है, वह अकेला है।'

वह सर पर हाथ रख अपने घर की दहलीज़ पर बैठ गया। गुत्थियों से उलझे हुए लम्बे घुँघराले बाल बिखरे हुए थे, आंखों से गंगा-जमुना बह रही थी। उसका हृदय आत्मग्लानि से भर गया, उसे अपने आप पर क्षोभ हो उठा। वह कितना अभागा है, पिता खाट पर तड़प तड़प कर दम तोड़ रहे थे और वह दवा की खोज में इधर उधर भटक रहा था। उसमें इतनी भी सामर्थ न थी कि उनके प्राणों की रक्षा कर सकता। वह ज्वर की पीड़ा से पड़े कराहते रहते और वह एक एक रुपये के लिए दिन दिन भर अखबारों, पत्रिका कार्यालयों में चक्कर लगाता रहता, इस भाग दौड़ में वह उनकी सेवा तक न कर पाता। पिता की जमा पूंजी का पर्याप्त अंश उनकी

बीमारी में व्यय किया गया किन्तु फिर भी वह न जी सके और शीघ्र ही उनका शरीर पञ्चभूतों में मिल गया, अविनाशी आत्मा काया का पिंजरा छोड़ कहीं विलीन हो गई।

उसे संसार से घृणा हो उठी, विश्व के स्वार्थ के प्रति उसके अन्तस्थल में विद्रोह की ज्वाला धधक उठी। जिस जनता का वह अपने काव्य, अपनी वाणी, अपनी भावनाओ से मनोरञ्जन करता था; जो पत्र-पत्रिकायें उसके गीतो द्वारा धनराशि एकत्रित करती थीं, किसी ने भी उसका साथ न दिया। केवल ऊपरी सहानुभूति उसके हृदय के चोट की पीड़ा कम न कर सकी।

मां उसे जन्म देते ही बीमारी के कारण निष्पंख पक्षी की भांति तड़फड़ा अस्थिपिञ्जर को छोड़कर चली गई थी। उसके बाद 'कम्मो दीदी' ने ही उसे पाल पोस कर बड़ा किया था। 'कम्मो दीदी' उसके पिता की चचेरी बहन थी, विधवा थी, असहाय थी। उसका कोई भी न था वह अपने भाई के घर ही रहती थी। उसने उसे कभी भी मां के अभाव का आभास नहीं होने दिया, सोते समय भी वह उसे अपने हृदय से लगा कर सोती।

किन्तु वयस्क होने के बाद वह भी उसे छोड़ गई और आज वह अपने पिता के शरीर को भस्मीभूत कर लौटा है।

धीरे धीरे बहते हुए आंसू उसकी मैली-कुचैली, फटी सी कमीज़ को भिगो रहे थे। उसने उठ कर बाहर का दरवाज़ा बन्द किया और फिर कुछ क्षण तक उस चारपाई की ओर देखता रहा जिस पर सुबह तक पिता का जर्जर शरीर पड़ा कराह रहा था। वह अपने को अधिक न सम्हाल सका और कटे हुए वृक्ष की भांति उस मूंज की ढीली चारपाई पर गिर पड़ा।

कमरे की खिड़की खुली थी, विश्रामस्थल को जाते हुए सूर्य की अलसायी किरणें धीमे-धीमे खिड़की से झांकती हुई चली जा रही थीं। उसने उठ कइ उसे भी बन्द कर दिया, वह नहीं चाहता था कि किरणें भी उसका रोकना देख सकें और पुनः खाट पर जा गिरा। वह बिलकुल अकेले में रोना चाहता था।

थोड़ी देर बाद दरवाजे पर थपथपाहट की आवाज आने लगी, किन्तु वह निश्चल पड़ा रहा। धीरे-धीरे थपथपाहट तेज हो गयी, उसे उठ कर दरवाजा खोलना

ही पड़ा। वह दरवाजा खोल एक किनारे खड़ा हो गया—'कौन ? किरण ?'

'हाँ किरण !'—कह वह छाया सी मूर्ति कमरे में आ गई। चारों तरफ अन्धकार था, दरवाजा खुलने से नाम-मात्र की रोशनी अवश्य कमरे में आ गयी थी किन्तु फिर भी उसे अन्धकार ही कहा जा सकता है। किरण उसी अन्धकार में कहीं से दियासलाई खोज कर ले आई। उसने उसे जला कर देखा एक कोने में कालिख से भरी लालटेन रखी है। वह बिना कोई शब्द किये वहीं पहुँच गयी और पास ही में पड़े हुए फटे कपड़े के टुकड़े से सावधानी के साथ उसे पोंछने लगी। लालटेन जब भली-भाँति साफ हो गई उसने उसे जला दिया। शीघ्र ही चारों तरफ़ प्रकाश छा गया, कमरे की हर वस्तु दिखने लगी। हिमालय अब भी उसी प्रकार दरवाजे पर अचल खड़ा सब कुछ देख रहा था।

'हिमालय, यहां आवो।'—किरण ने लालटेन को दीवाल में लगी खूँटी के सहारे टांगते हुए कहा।

किन्तु हिमालय अब भी उसी प्रकार यों ही अचल खड़ा रहा, हिला तक नहीं। इसी समय वायु का एक जोर का झोंका आया, दरवाजा बन्द हो गया।

'हिमालय, तुम्हें किरण बुला रही है।'—किरण ने रुंधे हुए स्वर में कहा।

'किरण!'—हिमालय अपने अश्रु-स्रोत को न रोक सका और आकर धड़ाम से खाट पर गिर पड़ा।

किरण आँचल से उसके आँसुओं को पोछती हुई बोली—'इतने अधिक कातर न बनो, तुम तो पुरुष हो। तुम्हें हृदय को पाषाण बनाना भी सीखना चाहिये। विपत्ति के समय इतनी अधीरता काम नहीं देती। फिर यह तो जीवन का क्रम है, आवागमन संसार का नियम है, इससे न तो आज तक कोई मुक्त हो सका है और न हो सकेगा। कृष्ण और बुद्ध सी महान विभूतियाँ भी इससे छुटकारा नहीं पा सकीं। कविता की भावुकता जीवन संग्राम में काम नही दे सकती।'

'किरण!'

'जानती हूँ आज तुम पर बज्रपात ही नहीं महान वज्रपात हुआ है किन्तु फिर भी अपने को सम्हालने का प्रयत्न करो। लो, मैं तुम्हारे लिये थोड़ा बहुत खाने को बना देती हूँ तब तक तुम मुँह हाथ धो डालो।

'नहीं, मैं कुछ भी नहीं खाऊँगा। मेरी तनिक भी इच्छा खाने-पीने की नहीं है।

'कैसे नहीं खाओगे, ऐसे कब तक बिना खाये रहोगे ? नहीं यह सब कुछ नहीं, देखो तो चेहरा कैसा पीला पड़ गया है।'—कह किरण अस्तव्यस्त गृहस्थी में से भोजन बनाने की सामग्री की खोज में लग गई। कठिनाई के बाद वह खिचड़ी बनाने लायक ही सामग्री जुटा सकी जब तक किरण खिचड़ी बनाती रही हिमालय चुपचाप बैठा उसकी ओर देखता रहा।

किरण का सुन्दर स्वरूप चूल्हे की आँच में निखर सा पड़ा था। गोरा रंग अग्नि की लालिमा से भी कहीं अधिक तपा हुआ प्रतीत हो रहा था। माथे पर बिखरे लम्बे और घने बाल शेषनाग की छाया के समान छाये हुए थे। थोड़ी देर में खिचड़ी पक कर तैयार हो गई। किरण ने हिमालय से मुँह हाथ धोने को कहा। हिमालय इच्छा न होते हुए भी किरण की अवहेलना न कर सका और हाथ मुँह धो बिछे हुए आसन पर बैठ गया।

'लो, खाओ।'

'मुझे खाना तनिक भी अच्छा नहीं लग रहा है, मेरा खाने को जरा भी जी नहीं करता है।'

'जानती हूँ, मैं कोई पत्थर नहीं हूँ, सब कुछ समझती हूँ।'

'पिता जी इतनी जल्दी क्यों चले गये किरण ?'

'फिर वही पागलों सी बातें !'

'मैं नहीं खाऊँगा,—कह हिमालय आसन छोड़ उठने लगा। हाथ का कौर थाली में गिर पड़ा।

'हिमालय, पागल हो गये हो क्या ? यह सब क्या कर रहे हो, थोड़ी कठोरता लाना भी सीखो।'—कह किरण हिमालय को पुनः उसके आसन पर बिठा दिया। किन्तु इस बार किरण भी अपने अश्रुवों को न रोक सकी और वे लाख रोकने का प्रयत्न करने पर भी छलक ही पड़े। हिमालय को मजबूरन ही थोड़ा बहुत खाना ही पड़ा। किरण ने उसी कमरे में रखे हुए बाल्टी के पानी से उसका हाथ धुला दिया।

'किरण, मैंने आज तुम्हें बहुत कष्ट दिया।'—हिमालय ने कृतज्ञता पूर्ण शब्दों में कहा।

'तुम जैसे कलाकारों की सेवा करने में मुझे कष्ट नहीं, सुख का अनुभव होता है।'

'कलाकार ! क्यों जले पर नमक छिड़कती हो। यदि कलाकार होता तो संसार कभी भी मेरे पिता को इस प्रकार मरने न देता, उनके जीवन रक्षा के लिये मुझे उनसे भीख न माँगनी पड़ती। खैर जो होना था सो हो

गया अब मुझे किसी से भी कोई शिकायत नही है। अब किरण तुम्हें जाना चाहिए, पर्याप्त अंधकार हो गया है, घर पर लोग तुम्हारी राह देख रहे होंगे। मै तुम्हारे ऋण से कभी भी मुक्त नही हो सकता।'

अच्छा लो मैं अब जा रही हूं। तुम दरवाजा बन्द कर लो, चुपचाप सो जाओ। मन को अशान्त मत करना. धैर्य और साहस से काम लेना सीखो। अभी तो तुम्हे जीवन संग्राम में और भी कितनी बड़ी बड़ी विपत्तियों का सामना करना है, इस प्रकार भावुक हृदय से कैसे काम चल सकेगा ? और हाँ; इस खिड़की को खोल लेना, स्वच्छ वायु आने से जी नहीं घबड़ायेगा।'—कह किरण चली गई। हिमालय दरवाजा बन्द कर खिड़की खोल चारपाई पर गिर पड़ा। खिड़की खोलते ही स्वच्छ वायु के एक झोंके ने कमरे मे प्रवेश किया और बाहर गगन पर कितने ही मोती से झलमलाते तारे दृष्टि गोचर होने लगे।

उसके समक्ष कितने ही दृश्य स्पष्ट हो चले। उसके पिता उसे कितना अधिक प्यार करते थे, कितने प्रेम और साध के साथ उन्होंने उसे पाल पोस कर बड़ा किया था। बीमार होते हुए भी उन्हें हर समय उसके आराम का ध्यान रहता। 'हिमालय इतनी देर तक मत जाग, मेरे

लिये क्यों इतना परेशान है, मेरी खातिर क्यों अपने स्वास्थ्य की आहुति दे रहा है।' आदि शब्द रह रह कर उसे सुन पड़ रहे थे।

यदि अपने पिता के अतिरिक्त उसे और किसी अन्य की सच्ची सहानुभूति मिली थी तो वह थी 'किरण!'

किरण हिमालय के पड़ोस में ही रहती थी, उसके पिता 'लखनऊ हायर सेकेण्डरी स्कूल' में प्रधान अध्यापक थे। उन्हें किसी भी चीज का अभाव नहीं था। अच्छा-खासा, हँसता-खेलता परिवार, धन-दौलत सभी कुछ था। पिता की सम्पत्ति के साथ ससुराल की सम्पत्ति के भी वही हकदार थे।

किरण अपने भाई-बहन में सबसे बड़ी थी और इस समय महिला विद्यालय में बी० ए० प्रथम वर्ष की छात्रा थी।

उसे कविता से बचपन से ही प्रेम था यही कारण था कि वह हिमालय को विशेष रूप से चाहती थी। ठीक आज से आठ वर्ष पूर्व इसी स्थान पर उसका और हिमालय का परिचय हुआ था। हिमालय बचपन से ही कविता में इतना अधिक व्यस्त रहता कि [illegible] के लिए अवकाश ही नहीं मिलता था। यही कारण था कि वह आठवीं

जमात के बाद और अधिक न पढ़ सका बल्कि कवि बन गया। किरण को जितना काव्य से प्रेम था उतना ही उसे अपनी पढ़ाई से भी प्रेम था अतएव वह पढाई के क्षेत्र में आगे बढ़ती ही गई।

आज से आठ वर्ष पूर्व हिमालय के पिता ने हिमालय के हाथ में किरण का हाथ देते हुए कहा था—

'हिमालय देखो तुम्हारे लिये एक नई सहेली लाया हूं, इसे भी अपने साथ खिलाया करो, यह तुममे भी तेज दौड़ सकती है। लेकिन देखो आपस में कभी भी झगडना मत।'

उस समय वे दोनों एक दूसरे को पाकर कितने प्रसन्न हुए थे। उस समय उनकी अवस्था ही क्या थी? किरण ग्यारह की रही होगी और हिमालय तेरह का।

हिमालय खाटपर पडा सिसक रहा था। उसे ऐसा लगा मानों उसके पिता उससे कह रहे हों—'हिमालय, देख तेरे लिये एक नई सहेली लाया हू, इसे भी अपने साथ खिलाया करो। लेकिन देखो आपस में कभी भी झगड़ना मत।'

उसने चादर से मुँह ढाँक लिया। चादर धीरे धीरे गीली हो चली।

दो

'किरण कहाँ थी इतनी देर तक ?'—किरण की माँ ने किरण के कमरे में प्रवेश करते हुए प्रश्न किया।'

'हिमालय को देखने गई थी।'

'हाँ बेटी, विचारे पर बड़ी विपत्ति पड़ी है। लेकिन इतनी रात गये तक वहाँ क्या कर रही थी ? तू अब सयानी हो गई है, तनिक दुनिया देखकर कदम बढ़ाना चाहिये।'

उसने कई दिन से खाना नही खाया था। जब जाकर जबरदस्ती अपने हाथों खिचड़ी पका कर खिलाई तब कही उसने कुछ खाया।'

'हाय राम ! तो क्या तूने उसे छू भी लिया ? अब तो हमारे भी करम फूट गये।'—कह किरण की माँ सर थाम कर बैठ गई।'

'क्यों क्या हुआ माँ ?'

'चुप कुलच्छनी, वंश का सत्यानाश करने पर तुली है।'

तब तक शोर गुल सुन कर किरण के पिता भी आ गये थे।

'क्यों क्या हुआ ?'

'नहीं सुना अपने लाड़ली की करतूत ?'

'कुछ कहो भी तो, आखिर हुआ क्या ?'

'कहूं क्या खाक ? भगवान धरती भी तो नहीं फटती वरना उसी में समा जाती। आग लगे आजकल की पढ़ाई को लड़कियां कालेज में दो अक्षर क्या पढ़ लेती हैं जग जीत लेती है।'

'कुछ कहोगी भी या बस यों ही चिल्लाती रहोगी ?'

'कहूं क्या जी ? सब तुम्हारी ही करतूत है। बँधवा दो मेरा बिस्तरा, मैं काशी में कट्टी भी मड़य्या डाल कर पड़ी रहूंगी लेकिन अब इस घर का पानी तक नहीं पीऊँगी।

'क्या हुआ बेटी, तू ही बता। यह तो बस यों ही चिल्लाती रहेंगी, चालीस वर्ष की उम्र में ही सठिया गई है।'—किरण के पिता ने किरण के सर पर हाथ फेरते हुए कहा।

'पिता जी बात.....।'

'चुप बात की बच्ची, बस इन्हीं के लाड़ प्यार ने तुझे चौपट कर डाला है। जानते हो हिमालय को पका-खिला के आ रही है।'—

किरण की माँ ने किरण की बात को बीच में ही काटते हुए कहा।

'तो क्या हो गया ? बस इसीलिए इतना बड़ा महाभारत रच डाला। औरतों को तिल का ताड़ करने की जैसी आदत सी होती है।'

'इनकी सुनो, जाने तुम्हें क्या हो गया है ? बाप आज ही मरा, छूत भी नहीं गया, दसवीं-तेरहीं कुछ भी नहीं हुई और बेटी पका-खिला कर आ रही है तब भी बाप कहते हैं तिल का ताड़ कर दिया।' आग लगे ऐसे लाड़ प्यार को। मैं भी किसी की बेटी थी लेकिन मेरे माँ बाप ने तो कभी ऐसे सर पर नहीं नचाया।'—कह किरण की माँ कमरे से बाहर चली गईं। किरण सिसक पड़ी।

'क्यों रोती हो किरण ?'—प्रिय प्रवास जी ने स्नेहपूर्वक उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए पूछा।

'यही सोच कर कि मृत्यु भी कितना बड़ा अभिशाप है, मृत्यु से कहीं अधिक भयंकर अभिशाप निर्धनता है। मृतक की मृत्यु से उसके घर वालों को छूत लगा जाता

है। जैसे मृत्यु केवल बदनसीबों, पापियों के पास ही आती है। हमारा समाज कितना कठोर है।'

'मैं स्वयं इन बातों पर विश्वास नहीं करता किन्तु फिर भी तेरा इतनी रात गये.....।'

'वहाँ रहना ठीक नहीं था, यही न आप कहना चाहते हैं?' किरण ने बीच में ही अपने पिता के वाक्य को पूरा करते हुए कहा।

'किन्तु यह बतलाइये, कल तक जिस हिमालय की कविता के लिये आप पागल रहते थे, जिसकी सराहना करते थे आज उसके पिता की मृत्यु पर झूठी सहानुभूति तक दिखलाने गये थे? नहीं! फिर यदि मैंने जाकर उस व्यथित हृदय को थोड़ी सान्त्वना देने का प्रयत्न किया तो कौन सा महान अपराध कर डाला?'—किरण ने रोष के साथ कहा।

'मैं इसे कब अपराध कहता हूँ? किन्तु यदि कोई, तुम्हें इतनी रात गये तक वहाँ देख लेता तो क्या सोचता?'

'क्या सोचता? यही कि मनुष्यता के नाते जो कुछ किरण का कर्तव्य था उसी को पूरा करने गई है।'

'तू अभी बच्ची है, अभी इन सब बातों को समझने की तुझमें क्षमता नहीं है। यह समाज है, इसकी दृष्टि में बेगुनाह भी गुनहगार साबित हो जाने पर सर नहीं उठा सकता।'

'मुझे ऐसे समाज की तनिक भी चिन्ता नहीं। मैं उस समाज को समाज नहीं समझती जहाँ न्याय और सहानुभूति का कोई भी स्थान न हो।'

'तुझे उन्माद हो गया है, युवावस्था का नया खून है तभी इतना शीघ्र उबाल पा खौलने लगता है। तू स्वत: सब कुछ समझने लगेगी। मेरी तो तुम्हारी ही खुशी में अपनी खुशी है। लेकिन इतना फिर भी कहूँगा, काँटों से भरे मार्ग पर खड़े होने के पूर्व कांटों को उखाड़ फेंकना अधिक श्रेष्ठ होता है। कँटीले मार्ग पर चलना बुद्धिमत्ता नहीं, इससे अपने ही पैर बिंधते हैं।'

'आप ठीक कहते हैं, किन्तु मैं आपकी इस दलील से पूर्णत: सहमत नहीं। यदि अपने पैर बिंधने पर भी वे कांटे टूट जायें तो पश्चातांप का कोई कारण नहीं।'

'तुझसे बहस कौन करे, अब तो तू लेक्चर देना भी सीख गई है।' कह प्रिय प्रवास जी मुस्कराते हुए कमरे से बाहर चले गये। किरण अपने पढ़ने वाली मेज पर

बैठ सामने पड़ी पत्र-पत्रिकाओं के पन्ने उलटने लगी। एक स्थल पर उसने देखा, हिमालय की छोटी सी तस्वीर छपी है और उसी के नीचे उसका एक छोटा सा गीत—

'दुनिया के मिट जाने पर भी,
मैं न कभी रोऊँगा।'

किरण सोचने लगी—क्या यह वही हिमालय है जिसे वह कुछ क्षण पूर्व देख कर आई है अथवा कोई दूसरा? इस गीत की रचना करने वाला हिमालय तो पाषाण से भी कठोर हृदय लिये हुए है, संसार की कोई भी शक्ति उसे नहीं पिघला सकती; और वह हिमालय—वह कितना कोमल है, कितना भावुक, अपने पिता की मृत्यु पर ऐसे फूट-फूट कर रो रहा था मानो उसमें हिम से भी शीघ्र द्रवित होने की क्षमता हो। कितना अन्तर है दोनों हिमालय में। एक हिमालय सा अचल है तो दूसरा बर्फ की चट्टान, एक कठोर से कठोर प्रहार से भी विचलित नहीं होता किन्तु दूसरा सूर्य की भीनी किरणों से ही द्रवित हो उठता है। किन्तु दोनों हिमालय तो एक है। इस कविता का निर्माण करने वाला हिमालय भी वही है जिसे वह अभी अभी देख कर आई है। किन्तु फिर भी दोनों में अन्तर है—यह लेखनी है और वह

जीवन; यह लिखना है, वह अनुभव करना; एक ओर कल्पना है तो दूसरी ओर घटना। दोनो में बहुत बड़ा अन्तर है।

मनुष्य कह सब कुछ सकता है किन्तु कर सब कुछ नही सकता। कभी कभी वह जो कहता है उसे पूरा भी कर दिखाता है किन्तु ऐसा सभी नही कर सकते। महात्मा गांधी के समान अहिंसा द्वारा स्वराज्य पाना सभी नही सोच सकते थे, यह तो हवा में किसी महल का निर्माण करना था किन्तु गांधी जी ने अपने निश्चय को पूरा कर दिखाया। उनके चरित्र मे दृढ़ता थी, वे असाधारण मानव थे, सभी बापू नही बन सकते। उन्हें तो हम देवता का स्वरूप मानते है। किन्तु ऐसा सभी नहीं कर सकते, सभी उनके जैसा चरित्र नहीं बना सकते, उनसा दृढ विश्वासी और संयमी नही बन सकते, इसी लिये उनकी असाधारण वर्ग से तुलना की जाती है। पर थे वह भी मानव ही।

साधारणत: मनुष्य अपनी ही कही बात पर नही चल पाता। जिसने आज से दस दिन पूर्व दुनिया के मिटने पर भी न रोने की कसम खाई थी वही आज अपने पिता की मृत्यु पर रो रहा था।

किरण इन्हीं विचारों में उलझी थी कि छोटे भाई श्याम ने उसे झकझोरते हुए कहा—'दीदी चलो, खाना ठण्डा हो रहा है।' 'मैं नहीं खाऊँगी श्याम मुझे भूख नहीं है।'—किरण ने उसके गोरे गालों का चुम्बन लेते हुए कहा।

'नहीं दीदी, तुम्हें चलना ही होगा।'—कह श्याम उसका आँचल पकड़ घसीटने लगा।

विवश हो किरण को जाना ही पड़ा। खाने के कमरे में चार आसन बिछे थे। थालियाँ परसी थी और प्रिय-प्रवास जी तथा उनकी पत्नी चुपचाप बैठी थी। किरण की माँ ने एक बार अंगारों सी लाल आँखों से किरण की ओर देखा फिर चारों व्यक्ति खाने लगे।

थोड़ा खा चुकने के बाद किरण ने हाथ रोक लिया। प्रिय प्रवास जी ने मुँह में कौर डालते हुए कहा—'आज बहुत थोड़ा खायी, थोड़ा और खा ले किरण।'

'खा कहाँ से ले, पेट में जगह हो तब न? हिमालय की सेवा करने से जो पेट भर गया है।' किरण की माँ ने ताना मारते हुए कहा।

'चुप भी रहो।'—प्रिय प्रवास जी ने अपनी पत्नी को झिड़की देते हुए कहा।

किरण वहाँ अधिक देर तक न रुक सकी और गिलास के बचे पानी में हाथ धो अपने कमरे में आ बिस्तर पर धम्म से गिर पड़ी। उसकी आँखों से आँसुओं की धार बह चली।

'माँ तुमने दीदी को क्यों डाटा?—श्याम ने बिगड़ कर पूछा।

'चुप रह नही तो तेरी भी जबान खीच लूंगी।'

श्याम अपना यह अपमान न सह सका और रो पड़ा।

प्रिय प्रवास जी ने पत्नी को मीठी डाँट बताते हुए कहा—

'तुम भी अजीब हो, जब देखो तब बच्चों के पीछे हाथ धोकर पड़ी रहती हो। प्यार करना तो दूर रहा बस जब देखो तब डाँट फटकार। लोग बच्चों के लिये तरसते हैं और तुम्हें जो है वह भी नहीं भाते।'

भोजन समाप्त होने के बाद किरण की माँ को ध्यान आया कि किरण मुर्दनी का छूत लेकर आई है, उसे सबने

छ लिया है। घर भर में मृतक का छूत समा गया है। बस क्या था, इतनी रात गये क्या प्रिय प्रवास जी क्या श्याम सभी को ठण्डे पानी में नहाना पड़ा। प्रिय प्रवास जी ने लाख प्रयत्न किया कि वह बच जायें किन्तु फिर भी उनके मलमल के कुर्त्ते पर उनकी पत्नी ने पानी से भरी बाल्टी उड़ेल ही दी।

श्याम लाख चिल्लाने पर भी न बच सका। किरण की तो विशेष दुर्गति हुई। सबके बाद किरण की माँ ने भी दो लोटे जल से स्नान किया। घर भर में पानी छिड़का गया, सब को तुलसी दल खाना पड़ा तब जाके कहीं सब पवित्र हो सके।

किरण बिस्तर पर पड़ी सोच रही थी—

क्या समाज के समस्त धर्म का ठेका उसी की माँ ने ले रखा है। उसे मृतक व्यक्ति से आखिर इतनी घृणा क्यों है? क्या वह कभी नहीं मरेंगी, अमर होकर आई है क्या वह चाहती हैं कि उनकी मृत्यु के उपरान्त भी लोग ऐसा ही करें। उससे घृणा करें, उसके परिवार से घृणा करें। यह तो प्रकृति का नियम है, इसमें मनुष्य का क्या बस? मरना तो रोका जा सकता नहीं फ़िर मृतक व्यक्ति से क्या घृणा करना? कम से कम आज के पढ़े लिखे

समाज में तो ऐसी संकीर्ण चीजों के लिये कोई भी स्थान नहीं होना चाहिए। आखिर इस प्रकार के अन्धविश्वासों का कब अंत होगा, दो लोटे जल से पवित्र होने की कल्पना कब तक स्थिर रहेगी? इस प्रकार धीरे धीरे विचारों में उलझी किरण की आंखें लग गईं। उस समय दीवार पर टँगी घड़ी में एक बज रहा था।

तीन

डाक्टर व्यास इलाहाबाद के इने गिने डाक्टरो में से है जो मृतक को भी जिलाने की क्षमता रखते है। अच्छी खासी प्रैक्टिस है, दारागज में बच्चा बच्चा उनके नाम मे परिचित है। धन तो उन्होंने बहुत कमाया है किन्तु उसका सदुपयोग करने वाला कोई नही है। केवल एक पुत्र है वह भी धन का ठीक इस्तेमाल नही जानता। दोनों पिता-पुत्र खूब सुखी जीवन बिता रहे है, उन्हे किसी बात की चिन्ता नही। फिर भी कभी कभी डाक्टर व्यास को किसी गहरी पीड़ा का आभास होता ही है—अपनी स्वर्गीय पत्नी अथवा माता-पिता के स्मृति में नही, अपने लड़के के चरित्र मे। राममोहन डा० व्यास का एकलौता पुत्र होने के कारण बहुत ही लाड़-प्यार में पला था और अब वह अपने ऊपर किसी का आधिपत्य स्वीकार नही करता।

राममोहन इलाहाबाद विश्वविद्यालय के उन छात्रों में मे है जिनकी ख्याति मे प्राय: सभी परिचित रहते हैं।

पढता तो एम० ए० प्रथम वर्ष में है किन्तु उसे जानते सभी हैं। उसकी जो कुछ भी ख्याति है वह उसकी प्रखर बुद्धि पर नहीं बल्कि कुछ तो अपने पिता के कारण दूसरे धन को पानी के समान बहाने से। ठाठ के साथ सिगर कार पर एक से एक कीमती सूट मे सुसज्जित होकर आता है। पढाई के नाम पर प्राक्सी से काम निकल जाता है। परीक्षा के दिनों में थोडे बहुत परिश्रम और नकल करने की कला के सहारे काम चल जाता है, यही कारण है कि आज तक उसे तृतीय श्रेणी से अधिक का श्रेय कभी नहीं प्राप्त हुआ। परीक्षा के दिनों में जब लडके पढ़ाई मे व्यस्त रहते है राममोहन पर्चे आउट करने में प्रयत्नशील रहता है। विश्वविद्यालय की किसी भी सभा-सोसाइटी अथवा परिषद का राममोहन के बिना काम नहीं चल पाता, यही कारण है कि वह प्रत्येक वर्ग के छात्रों, प्रोफेसरों से सम्बन्धित रहता है।

दिन भर विश्वविद्यालय की रंगीन तितलि ् े में जी बहलाना, सन्ध्या के समय नौका विहार हाउस घूमना, सिनेमा भवन में धूम्रपान जीवन का उद्देश्य सा बन गय राममोहन पर आकर्षित रह

....

की ख्याति है। लड़कियाँ केवलमात्र उसके धन पर ही आकर्षित होती हों यह बात नहीं है। वह देखने सुनने में भी अच्छा खासा है, गोरा रंग, आकर्षक चेहरा, सुन्दर व्यक्तित्व सभी कुछ है।

डाक्टर व्यास जानते हैं कि यदि उनके लड़के में कोई दुर्गुण है तो बस केवल एक—विश्वविद्यालय की छात्राओं के पीछे लगा रहना। उन्होंने राममोहन को कई बार समझाने का प्रयास किया, डराया-धमकाया भी किन्तु उस पर इनमें से किसी बात का रत्ती भर भी प्रभाव नहीं पड़ा। वह अपनी आदत से लाचार था। दिनों दिन लड़कियों का साथ कम होने के स्थान पर बढ़ता ही जा रहा था। पहले तो मिस चावला, मिस रंजना, मिस छुम छुम से ही मैत्री थी किन्तु अब तो झुण्ड की झुण्ड लड़कियों से सम्बन्ध था। आज मिस कुमुद के साथ डिनर है, कल मिस ढाँढ़ा के साथ नौका बिहार, तो परसों मिस रिम-झिम के साथ पिक्चर का प्रोग्राम।

र राममोहन की सुख चैन की जिन्दगी की
के साथ आगे बढ़ी जा रही थी, मार्ग
— थी। दो दिन के जीवन में खा
े का सबसे सुन्दर उदाहरण

राममोहन था। जब डाक्टर व्यास ने देखा लड़का सुधरने के स्थान पर दिनो दिन हाथ से निकलता जा रहा है तब उन्हें बड़ी चिन्ता हुई। बदनामी भी काफी हो रही थी।

एक दिन जब राममोहन यूनिवर्सिटी जाने को बिलकुल तैयार था, डा० व्यास ने उसके कमरे में प्रवेश करते हुए कहा—

'राममोहन, आज मुझे तुमसे कुछ कहना है।'

'कोई विशेष बात है पिताजी ?'

'हाँ।'

'लेकिन यूनिवर्सिटी की देर हो रही है।'—राममोहन ने कलाई पर बँधी घड़ी को देखते हुए कहा।

'होने दो यूनिवर्सिटी की देर, उस देर से कोई विशेष हानि नही होने की किन्तु मैं जो कुछ कहना चाहता हूं उसमें देर होने पर बहुत बड़ी हानि होने का अंदेशा है।'

'कौन सी बात ?'—राममोहन ने कुछ सकपकाते हुए कहा।

'तुम्हारी ये आदतें मुझे तनिक भी पसन्द नहीं है।'

'कौन सी ?'

यनिवर्सिटी गर्ल्स के साथ रात को देर तक घूमना।'

'किन्तु मैं तो.....'

'झूठ बोलने की कोशिश मत करो, तुम इस प्रकार अब और अधिक मेरी आँखो में धूल नहीं झोंक सकते। मैंने जो कुछ भी सुना है ठीक सुना है, सुना ही नही देखा भी है।'

डा० व्यास ने पुत्र की बात को काटते हुए कहा। बचाव का कोई अन्य उपाय न देख उसने सर नीचा कर लिया।

'जावो अब आज से मैं तुम्हें कभी इस प्रकार की हरकतों में उलझा नही देखना चाहता। अब तुम जा सकते हो।'—कह डा० व्यास कमरे से बाहर हो गये। राममोहन ने झट कोट पहना और बगल में पालिटिक्स की किताब दबा कमरे से बाहर हो गया। जान बची तो लाखों पाये। उसे अपने पिता पर बड़ी खीझ आई। भला जवान लड़के के बीच में बूढ़ों को दखल देने का क्या हक? वह स्वयं अपना भला बुरा अच्छी तरह समझते हैं। फिर मैंने कौन सा भला बुरा काम किया है, यही न कि लड़कियों के साथ घूमता फिरता हूँ, जवान हूँ, अभी न घूमूँगा तो क्या बुढ़ापे में घूमूँगा। इन बूढ़ों को जवान से कितना रश्क होता है। मालूम होता है किसी ने

जरूर उनके कान भरे हैं अन्यथा एकाएक यह फिट उन्हें कदापि न आता।

अन्तिम पीरियड समाप्त होते ही राममोहन ने देखा मिस रीता चली जा रही है। उसने उन्हें रोकते हुए कहा—'हलो मिस रीता!'

'हलो राममोहन। कैसे हो?'

'बिलकुल ठीक।'

'क्या आज कोई प्रोग्राम है?'

'चलो काफी हाउस चला जाय, फिर वहाँ से पिक्चर चलेंगे, देर तो नहीं होगी?'—राममोहन ने प्रश्न किया।

'आज देर का क्या, आज तो डैडी और ममी दोनों दिल्ली गये हैं। मैटेरिनल अंकिल डेथ बेड पर पड़े हैं। घर पर मैं ही हूँ, यों तो नौकर चाकर सभी हैं।'

'तब तो बिलकुल फ्री है, आज खूब कटेगी।' कह राममोहन उसे अपनी कार की ओर ले चला।

क्षण भर में कार यूनिवर्सिटी का छोर छोड़ साफ-सुथरी वीरान सड़क पर घूमती हुई काफी हाउस के सामने जाकर रुक गई। दरबान ने एक लम्बा सा सलाम दिया और कार का दरवाजा खोल एक किनारे खड़ा हो गया। दोनों हाथ पकड़ काफी हाउस में ओझल हो गये।

काफी हाउस की चहल पहल देखने योग्य होती है। बस शाम हुई और काफी हाउस में जान आई। यहाँ प्राय: प्रत्येक वर्ग के व्यक्तियों का जमाव रहता है। कुछ तो एक प्याली काफी के साथ अपना समय काटने को आ जाते हैं और कुछ किसी विशेष प्रयोजन से। थोड़े से पैसे में बिजली का पंखा, चहल पहल सभी कुछ मिल जाता है। कम्युनिस्ट भाइयों की सभी स्कीमें; राज्य में क्रान्ति मचाने, देश में उलट पलट करने की सभी योजनाओं का यहीं निर्माण होता है। क्षात्रों का भी जमघट कम नहीं रहता, वे यहाँ बैठे अपने पिता की गाढ़ी कमाई काफी के प्यालों और गोल्ड फ्लेक सिग्रेट में बैठे फूँका करते हैं। बहुत से तो ऐसे भी लोग होते हैं जो साहूकार के कर्ज बढ़ाते रहने पर भी यहाँ आकर सिगार का धुँआ उड़ाना नहीं छोड़ सकते।

राममोहन ने काफी का अन्तिम घूँट पीते हुए कहा—

'अब क्या प्रोग्राम है रीता ?'

'तुम्हीं सजेस्ट करो।'

'चलो स्वयंसिद्धा देख आयें, सुना है बड़ी अच्छी तसवीर है।'

'चलो ! मैंने भी बड़ी तारीफ सुनी है।'

'तो यही तय रहा।'

'बिलकुल।'—कह दोनों उठ खड़े हुए तब तक बैरे ने बिल लाकर रख दिया, 'सात रुपये दस आने।' राममोहन ने प्लास्टिक से चमचमाते हुए पर्स में से दो दो के चार नोट निकाल कर प्लेट पर फेंक दिया। दोनों आगे बढ़ गये, बेअरा लम्बा सा सलाम दे नोट सम्हालने लगा।

जिस समय राममोहन और रीता पिक्चर पैलेस पहुँची चित्र प्रारम्भ हो चुका था। केवल आगे की दो सीटें खाली थी। दोनो बालकनी क्लास में बैठ गये। चित्र चल रहा था राममोहन के मुँह मे 'पाँच सौ पचपन' सुलग रही थी, धुँआ घूम फिर कर पीछे की सीट पर जा रहा था। राममोहन के बाहुपाश में रीता अच्छी तरह बँधी हुई थी। इन दोनों की पिछली सीट पर बैठे अधेड़ उम्र के सज्जन को रह रह कर क्रोध आ रहा था। एक तो सिगरेट का धुँआ उन्ही को आउटलेट समझ उनके आस पास चक्कर लगा रहा था दूसरे उन्हें इस आधुनिक जोड़ी का इस प्रकार प्रकट रूप से आलिंगन भी नहीं भा रहा था। किसी प्रकार वह अपना क्रोध

दबाये बैठे रहे। सोच रहे थे सरकार कुछ भी नहीं करती, सिनेमा भवन में धूम्रपान तक नहीं बन्द कर पाती। बीमारी को रोकने के प्रयत्न में हजारों रुपये खर्च डालती है किन्तु बीमारी के असली जड़ो को काटने की कोशिश ही नहीं करती। जहाँ स्वच्छ वायु आने की कोई भी सुविधा न हो वहाँ सिगरेट के धुँए से वातावरण को और भी दूषित बनाना कहाँ तक सही है। इसका दर्शकों के फेफड़े पर कितना बुरा असर पड़ता होगा। और इस प्रकार वह अपना समस्त क्रोध सरकार पर ही उतार रहे थे।

मध्यान्तर हुआ, हाल की बिजलियां जगमगा उठीं। अधेड़ सज्जन ने घृणा से इस अविवाहित जोड़ी की ओर देखा और एकदम से चौंक से पड़े—'कौन राममोहन ?' वे क्रोध का घूँट पीकर रह गये, उनके लिये यहाँ एक भी क्षण रुकना दुष्कर हो गया और वे सिनेमा भवन से बाहर हो गये। क्रोध के मारे उनका समस्त शरीर काँप रहा था। आज ही उन्होंने राममोहन को सीख दी थी और उसका यह परिणाम। यदि उनका बस चलता तो उसे इसी स्थान पर उचित दण्ड देते किन्तु इतने आदमियों के बीच यह संभव न था।

पिक्चर समाप्त होने पर राममोहन रीता को अपने बगल में बिठा उसके घर तक छोड़ने गया—'कैसी पिक्चर थी रीता ?'

'बहुत सुन्दर।'

'मुझे भी काफी पसन्द आई, अब ऐसे ही चित्रों की हमारे स्वतन्त्र भारत को आवश्यकता है। अधिकतर आजकल के हिन्दी फिल्मों में शैलो लिट्रेचर ही मिलता है। बस प्यार, मुहब्बत, तड़फन, विवाह या उत्सर्ग तक ही कहानी सीमित होती है। गीतो के नाम पर दिल, राजा, रानी आदि शब्दो का ही तोड़-मरोड़ रहता है।'

'सचमुच भारतीय फिल्मो का स्तर बहुत गिर गया है।'

'सरकार इस ओर ध्यान ही नही देती।

'बड़ी निकम्मी है सरकार।'

तब तक रीता का बँगला आ गया था। राममोहन ने रीता को उतार धीरे से उसकी पतली सी कलाई को चूम लिया।

'हिश् बड़े खराब हो।'

'सो तो हूँ ही, पर सिनेमा से कम, अच्छा टा-टा' और क्षण भर में उसकी मोटर अन्धकार में विलीन हो गई।

चार

उस दिन की घटना के बाद से प्रिय प्रवास जी के परिवार में एक आँधी सी आ गई। किरण की माँ ने निश्चय कर लिया था कि जब तक उसके पति किरण की पढ़ाई का क्रम नहीं तोड़ेंगे, उसके विवाह की हामी नहीं भरेंगे, वह उस घर का जल ग्रहण नहीं करेगी।

पहले तो प्रिय प्रवास जी ने अपने पत्नी के इस निश्चय को हँस कर टाल दिया। वह जानते थे कि उनकी पत्नी के इस निश्चय से कोई विशेष हानि होने की संभावना नहीं है। यदि वह अपने घर का पानी नहीं पीती तो क्या, पडोस से माँगा कर पी ही लेती है।

किरण की माँ जब अपनी इस उक्ति से भी अपने पति को न पिघला सकी तो उसने किसी अन्य उक्ति को ढूंढ़ निकालने का निश्चय किया। सहसा उसे याद हो आया, क्यों न भूख हड़ताल की जाये? आज के युग में

भूख हड़ताल की बड़ी धूम है। सरकार का विरोध करना हुआ भूख हड़ताल, फीस और सिनेमा कर बढ़ गया तो भूख हड़ताल, समाचार पत्रों में आत्म विज्ञापन करवाना हुआ तो भूख हड़ताल। बात किरण की माँ के दिमाग में अच्छी तरह बैठ गई, इससे और कोई सुगम उपाय भी न था। जब इतनी बड़ी सरकार इतनों को भूख हड़ताल से मरने नहीं देती तो फिर उसका पति भी उसे भूखों तो मर जाने देगा नहीं। समस्या भी सुलझ जायेगी।

बस क्या था, दूसरे दिन प्रिय प्रवास जी की पत्नी ने आधुनिक युग के सबसे नवीनतम हथियार को प्रयोग में लाने का एलान कर दिया। एक दो दिन तो प्रिय प्रवास जी ने पत्नी के भूख हड़ताल की ओर ध्यान न दिया, वह अच्छी तरह जानते थे कि उनकी पत्नी अवश्य लुक-छिप कर खाती-पीती होंगी, किन्तु इस प्रकार अशान्तिमय पारिवारिक जीवन कब तक चल सकता था। उन्होंने पत्नी से समझौता कर लेना ही उचित समझा। सोचा किरण का विवाह तो करना ही है, यदि कल न करके आज ही कर दिया जाय तो कोई विशेष हानि न होगी। रहा किरण की पढ़ाई के विषय में सो उसे पढ़ा कर कहीं नौकरी तो करानी नहीं है अतएव पढ़ाई छुड़ा देने से भी

कुछ अधिक नहीं बनता बिगड़ता। फिर इन सबसे बढ़कर घरेलू कलह से भी उनका जी ऊब सा गया था।

'क्या सच कह रहे हो ?'

'हाँ सच कह रहा हूँ।'

'तो कल से किरण कालेज नहीं जायेगी ?'

'हाँ ! नही जायेगी, बस अब तो प्रसन्न हो।'—कह प्रिय प्रवास जी कमरे से बाहर हो गये। उनका जी खिन्न हो उठा था। चार-पाँच दिन के उथल-पुथल के बाद उनका घर पुनः स्वर्ग बन गया। अभी किरण और श्याम अपने अपने कालेज-स्कूल से वापस नहीं लौटे थे, प्रिय प्रवास जी पत्नी से समझौता करने में लग गये जिसमें देर हो जाने के कारण वह स्कूल नही जा सके। आज उन्हें कुछ शान्ति का अनुभव हो रहा था, भोजन आदि से निवृत्ति पा कमरे में पलँग पर लेटे हुए हुक्का गुड़गुड़ा रहे थे। पखे की तेज हवा से चिलम में लपटें निकल रही थीं और धुँए की कालिमा धीरे-धीरे गहरी होती जा रही थी। अभी-अभी आँख लगी ही थी कि पत्नी ने प्रेमपूर्वक सर पर हाथ फेरते हुए कहा—'तुम तो कुछ समझते नहीं, तुम्हें कोई चिन्ता ही नहीं। लड़की

सयानीं हो गई है इसका तुमको ध्यान ही नहीं। लोग क्या कहते हैं। क्या सुनते हैं तुमको क्या मालूम ?'

'हूं ! प्रिय प्रवास जी ने हुक्के का लम्बा कश लेते हुए कहा।

'बस, कुछ भी हो, हूं कर हवा में उड़ा देंगे। किसी बात की फिकर नहीं।'

'बस बन्द भी करो, थोड़ा दम तो ले लेने दो।'

'फिर बिगड़ गये ?'

'तो करो ना शादी, कौन मना करता है ? लेकिन लड़का क्या मैं पैदा करूं ?'

'तो कहो लड़का नहीं सूझता। अगर लड़का मैं बता दूं तो क्या इनाम दोगे ?'

'जो तुम्हारे जी में आये करो। जाने तुम्हे किरण से क्यों इतनी चिढ़ हो गई है जो हर समय उसे घर से निकालने की ही बात किया करती हो।'

'हाँ मुझे न चिढ़ होगी तो और किसे होगी। तुम्हीं ने जो उसे नौमास तक पेट में पाल पोस कर बड़ा किया है। मैं माँ हूं, मेरी ममता का एक अंश भी नहीं पा सकते। वह जो किसी सयानी लड़की के माँ के दिल से पूछो।'

'तो बताओ न कौन लड़का है ?'

'अरे वही डा० व्यास का।'

'हूं ! अब तो बहुत बड़ा हो गया होगा।' —प्रिय-प्रवास जी ने कुछ संतोष की साँस लेते हुए कहा।

'अब तो बी० ए० से आगे पढ़ता होगा।'

'हूं।'

'खूब पैसा है। दो दो मोटरें हैं, मकान-जायदाद सभी है। बस रानी की तरह राज्य करेगी किरण।'

'लेकिन डा० व्यास राजी हो जायेंगे ?'

'इसकी चिन्ता तुम न करो, यह सब मुझ पर छोड़ दो।

'जैसा जी में आये करो।' कह प्रिय प्रवास जी ने अपन सिर से बला टाली।

किरण के विवाह की स्वीकृति पा प्रियप्रवास जी की पत्नी प्रसन्नता से खिल उठीं। जिनका कुछ समय पूर्व चण्डिका से भी अधिक विकराल रूप था, इस समय साक्षात लक्ष्मी मालूम हो रही थी। वह तुरन्त किरण के कमरे में जा डा० व्यास को पत्र लिखने लगीं। पांच-सात दर्जे की पढ़ाई के सहारे जो कुछ भी पत्र लिखा जा सका वह यह था।

डाक्टर साहब,

नमस्ते ! आशा है आप अच्छी तरह होंगे। यहाँ सब कुछ ठीक है। ईश्वर की कृपा से आज वह शुभ दिन आया है जब मैं आपसे अपने मांग के पूर्ति की प्रार्थना कर रही हूं। जब हम इलाहाबाद में थे तभी आपने वादा किया था कि चि० राममोहन का विवाह किरण से ही करेंगे। दो साल पहले भी जब आप आये थे, आपने अपने पुराने वादे को दुहराया था कि किरण को ही अपनी बहू बनायेंगे।

अब किरण काफ़ी सयानी हो गई, बी० ए० के पहले साल में पढ़ रही है राममोहन भी खूब बड़ा हो गया होगा। अब किरण की पढ़ाई बन्द कर रही हूं, सोचती हूं उसका हाथ राममोहन के हाथ में दे निश्चिन्त हो जाऊँ। आपकी क्या आज्ञा है। कृपया पत्र का उत्तर लौटती डाक से दें। दोनों बच्चे अभी पढ़कर वापस नहीं लौटे हैं, उनका प्रणाम स्वीकार हो।

शेष शुभ

आपकी वही भाभी साहिबा

बहुत ही सावधानी के साथ पत्र लिखने के बाद किरण की माँ ने उसे कई बार पढ़ा और फिर उसे एक

लिफाफे में बन्द कर अपने पति के पास ले गई–'लीजिये, इस पर अंग्रेजी में पता लिख दें।'

प्रिय प्रवास जी ने जल्दी से पता घसीट दिया। उनकी पत्नी ने उसे हवा में सुखाने के बाद कई बार अपनी धोती के छोर से पोंछा और अपने पति के ड्रार में से टिकट निकाल लगा दिया। इसके बाद लिफाफे को नौकर के हाथ में देते हुए कहा—'देख इसे डाकखाने में अभी छोड़ आ। डाक बाबू से एक रसीद भी लिखवा लेना कि तू ने चिट्ठी छोड़ी है। लालरंग के बक्से में ही छोड़ना और कहीं नहीं। अगर कहीं चिट्ठी गुम हुई तो तेरी हड्डी पसली एक भी न रहने दूंगी। जा इसे अभी छोड़ आ नहीं तो शाम की डाक निकल जायेगी।'

नौकर बहुत ही सावधानी के साथ अपनी कमीज के जेब में चिट्ठी को छिपा सड़क की भीड़ में ओझल हो गया। किरण की मां उत्सुकता पुर्वक उसके वापस लौटने की प्रतीक्षा करने लगीं।

पांच

किरण ने कालेज से लौटते समय सोचा, तीन-चार दिनों से माँ के उलझन में वह हिमालय के यहां नहीं जा पाई है, चलें कुछ देर के लिये वहाँ भी होती चलें।

हिमालय के घर पहुंच कर उसने देखा; द्वार खुला था, हिमालय के कमरे में भीनी-भीनी धूप झांक रही थी। हिमालय कुछ लिखने में संलग्न था।

'हिमालय।'

'कौन किरण ?'

'हाँ किरण,'—कह किरण खाट पर जा बैठी।

'आज कई दिनों बाद आई।'

'बहुत दिन कहाँ, तीन-चार दिन ही तो हुए।'

'तुम्हारे लिये तो तीन-चार दिन भी कुछ नहीं है। मेरे लिये तो एक क्षण एक-एक पहर के समान बीतता है। तुम्हारे आ जाने से हृदय को कुछ शान्ति मिल जाती है, ऐसा लगता है मानो अपना भी कोई है।'

'तुम हमेशा इसी प्रकार मन को तोड़ने वाली बातें कहते हो, क्या सब कवि तुम जैसे ही होते हैं।'

'कविता करना कुछ और बात है, सांसारिक व्यवहार कुछ और। उस ओर केवल कल्पना का संसार होता है किरण। जाने दो इन बातों को, पर हाँ कभी-कभी इस गरीब की भी सुधि ले लिया करो।'

'तुम्हीं मेरे यहाँ कब आते हो?'—किरण ने झुंझला कर पूछा।

'बड़े आदमियों के घर छोटों का बार-बार जाना अच्छा नहीं लगता।'

'छोटों के घर बड़ों का जाना शोभा देता है, क्यों?'

'हाँ। शबरी के द्वार पर राम के जाने से जो शोभा थी वह कृष्ण के द्वार पर सुदामा के जाने में कहाँ?'

'तो हम बड़े आदमी हैं और तुम छोटे।'

'हाँ।'

'अच्छी बात है, तो मैं वापस जाती हूं। जब तुम मुझे पराया ही समझते हो तो फिर यहां आने से लाभ।' कह किरण जाने को उद्यत होने लगी। हिमालय ने उसे रोकते हुए कहा—'मैं तुम्हारे लिये थोड़े ही कह रहा हूं।'

'तुम नाहक नाराज हो गईं। अच्छा इस बार क्षमा कर दो आगे से कभी ऐसा नहीं कहूंगा।'

किरण बैठ गई, हिमालय भी उसके सामने बैठ गया।

'हिमालय, मैं सोचती हूं आज के युग में कलाकार की क्या कीमत है ?'

'बस पारिश्रमिक के नाम पर चंद चांदी के टुकड़े फेंक देना।'

'कहीं काम क्यों नहीं कर लेते ? जी भी बहलेगा और आर्थिक कठिनाई का भी हल हो जायेगा।'

'किरण तुम एक भावुक हृदय के व्यक्ति से नौकरी करने को कहती हो, जो सदैव कल्पना और सौन्दर्य के कानन में स्वच्छन्दतापूर्वक विचरण करता हो वह दफ्तर के अशान्त वातावरण में कैसे काम कर सकता है। जो निर्झर में संगीत, वसंत में नारी का स्वरूप, हिमालय की उच्च शिखरों में अचलता का सन्देश ढूंढता हो वह चांदी के चन्द टुकड़ों के लिये कैसे अपना जीवन बेच सकता है। फिर मेरे पास बी० ए० की डिग्री भी तो नहीं है जो कहीं काम पा सकूं।'

'डिग्री नही है तो क्या ? ज्ञान तो विस्तृत है, एम० ए० वाले भी ठीक से तुम्हारी कविता का अर्थ नहीं लगा पाते ।'

'ठीक है, किन्तु ज्ञान और डिग्री में अन्तर है । एक अथक परिश्रम, जीवन संघर्ष के बाद मिलता है दूसरा रुपयों के बल । आज के युग में ससार मे खड़े होने के लिए ज्ञान की नही डिग्री की आवश्यकता होती है ।'

'तो इस प्रकार तुम्हारा जीवन कब तक चलता रहेगा ?'

'जब तक यह जीवन की गाड़ी खिच सकेगी ।'

'लेकिन एक से दो होने पर क्या होगा ?'—किरण ने मुस्कराते हुए पूछा ।

'उसकी कल्पना ही व्यर्थ है ।'

'क्यों ?'

'इसलिये कि मुझसे कोई विवाह ही नही करेगा, मेरे पास है ही क्या ?'

'क्या नही है तुम्हारे पास ?'

'क्या सब कुछ है ?'

'हाँ ।'

'तो तुम भी मुझसे विवाह कर सकती हो ?'—हिमालय ने उसकी ठोढ़ी को अपने हाथो मे उठाते हुए कहा ।

'धुत तुम बड़े.....'—और फिर किरण वहाँ एक क्षण भी न रुक सकी, अपने घर भाग आई। हिमालय रोकता ही रहा किन्तु वह न रुकी। लज्जा से उसका समस्त शरीर पुलकित हो उठा। हिमालय के म्लान चेहरे पर एक हल्कीसी मुस्कराहट खेल गई।

किरण का अंग-प्रत्यंग रोमांचित हो उठा था, आज हिमालय ने उसे प्यार किया था। कितना अच्छा है वह सागर-सा शान्त हृदय, प्रेम और त्याग की सौम्य मूर्ति। वह कितनी भाग्यशालिनी है। क्या सचमुच उसका विवाह हिमालय से हो सकता है? नहीं, धत्, वह भी कितनी पागल है—लेकिन क्यों नहीं हो सकता, उसमें अभाव ही किस चीज का है? सुन्दरता और कला का कितना सुन्दर सामंजस्य है, उसका भविष्य कितना उज्ज्वल है। मालूम होता है वह पागल हो गई है, उसे उन्माद हो गया है। अब तक तो उसने कभी भी ऐसा नहीं सोचा था फिर आज ये सब बातें एकाएक उसके मस्तिष्क में क्यों चक्कर काट रही हैं? हिमालय की तसवीर रह-रह कर आंखों के सामने खिची आ रही थी। उसे ऐसा लग रहा था मानो हिमालय की बड़ी-बड़ी आँखें उससे कुछ पूछ रही हों। वह बहुत प्रसन्न थी, 'प्रेम' के दो शब्दों में कितनी

गहराई छिपी होती है इस बात का उसने आज जीवन में प्रथम बार अनुभव किया था। जब हिमालय की कोमल अंगुलियों ने उसकी ठोढ़ी को उठाने का प्रयास किया, उनके स्पर्श मात्र से कैसी सिहरन-सी दौड़ गई थी उसके बदन में।

हिमालय सोच रहा था—'काश, किरण उसकी हो सकती; उसका नीरस जीवन जाग उठता, उसमें एक प्रेम की लहर दौड़ने लगती, उसके हृदय की समस्त वेदना और पीड़ा शान्त हो जाती। उसके दिल में बने गहरे घाव भर से जाते। किरण से उसे प्रेरणा मिलती और वह अपने काव्य में सौन्दर्य ला पाता। किन्तु यह सब कुछ नहीं हो सकता, किरण उसे नहीं मिल सकती। किरण उसके लिये नहीं किसी और के लिये बनी है। यदि किरण चाहे तो क्या वह उसकी नहीं हो सकती? संभव है यह हो सकता हो किन्तु इससे उन दोनों के बीच की अब तक की पवित्रता पर कलंक लग जायगा। समाज क्या सोचेगा, लोग क्या सोचेंगे? उनके विषय में कितनी ही धारणाएं बनेंगी। इन सबसे बढ़कर अपराध होगा दो विभिन्न वर्गों का सम्मिलन। समाज इस विद्रोह को कभी सहन नहीं कर सकेगा, वे भले ही विद्रोही बनकर जीवित रहें किन्तु

किरण के परिवार पर इसका कितना बुरा असर पड़ेगा। किरण के माता-पिता हिमालय को कभी भी क्षमा नहीं कर सकेंगे। क्या किरण उसके साथ सुखी रह सकेगी? जिसके पास स्वयम् पेट भरने का साधन न हो वह किरण जैसी नारी को कैसे सुखी और सन्तुष्ट रख सकता है? भले ही वह अपनी इस कमजोरी को न प्रकट करे किन्तु क्या उसका हृदय इन अभावों से एक बार सिहर नहीं उठेगा? आज उसने बहुत बड़ा अपराध किया है, उसे किरण से ऐसा कभी नहीं कहना चाहिये था। जाने वह क्या सोचती होगी? कहीं किरण उसकी इस बात से उससे घृणा न करने लगी हो, कहीं उसके हृदय में उसके प्रति अविश्वास की भावना न जाग उठी हो? उसने जो कुछ भी किया है वह उचित नहीं था। उसे इस तरह की बात करने से पहले किरण के हृदय को अच्छी तरह से टटोल लेना चाहिए था। बिना किरण की भावनाओं से परिचित हुए एकाएक इस प्रकार की बात कर बैठना उन्माद नहीं तो और क्या है?

७:

जिस दिन डाक्टर व्यास ने अपनी ही आँखों अपने पुत्र की लीला देखी, वे क्रोध से पागल हो उठे और वहां एक क्षण के लिए भी नहीं रुक सके। थोडी देर तक उनका हृदय बहुत ही अशान्त रहा, क्रोध की सीमा इतनी अधिक बढ़ गई थी कि वह कुछ देर तक हाथ में एक पतला सा बेंत लिये कमरे में इधर उधर टहलते रहे फिर अपना समस्त क्रोध नौकरों पर उतार शान्त हो बैठ गये। अँग्रेजी की एक बहुत पुरानी कहानी है एक बार जब किसी मिल का मैनेजर अपनी पत्नी से रुष्ट होने पर भी अपना क्रोध उस पर न उतार सका, उसके क्रोध का शिकार कार्यालय के एक अर्दली को होना पड़ा। वह अपने मालिक की प्रतीक्षा में दफ्तर के दरवाजे पर बैठा ऊँघा रहा था, मालिक उसके नित्य प्रति की इस आदत को आज सहन नहीं कर सके और उसे दो चार ठोकरें लगा शान्त हो गये। सबेरे सबेरे पिटने पर अर्दली को

जो क्रोध हुआ उसे उसने अपनी गरीब पत्नी पर उतारा जो बड़े प्रेम के साथ उसके लिये भोजन पका रही थी।

इस प्रकार डाक्टर व्यास के क्रोध का अन्त उनके नौकरों पर हो चुका था। वे सोच रहे थे—इस प्रकार दण्ड अथवा भय से राममोहन को नहीं सुधारा जा सकता। वह कोई दुधमुँहा बालक तो है नहीं जो उस पर इन बातों का प्रभाव पड़ सके। उन्हें कोई अन्य उक्ति ही ढूढनी पड़ेगी।

उस दिन के बाद डा० व्यास बहुत ही चिन्तित रहने लगे, हमेशा कुछ न कुछ सोचते ही रहते। अन्त में एक दिन उनकी बुद्धि ने जोर मारा और उन्होंने राममोहन को सुधारने का तरीका खोज ही निकाला। उन्होंने सोचा—यदि राममोहन का विवाह कर दिया जाय तो वह अवश्य ही सुधर जायगा। यदि कहीं विवाह करने पर भी वह न सुधरा, अपनी पुरानी आदतों को न छोड़ सका तब नाहक ही एक कन्या के ज़िन्दगी की बर्बादी का पाप उन पर लगेगा। किन्तु ऐसा नहीं हो सकता। विवाह का बन्धन आसानी से नहीं तोड़ा जा सकता, जो एक बार इस बन्धन में जकड़ जाता है वह इससे कभी भी मुक्त नहीं हो सकता।

उच्छृङ्खल से उच्छृङ्खल व्यक्ति को भी इससे छुटकारा पाने के लिए विशेष साहस करना पड़ता है। स्वच्छंद से स्वच्छंद प्रवृत्ति का मनुष्य भी इसमें फंस जाने पर क्रमशः अपनी स्वतंत्रता खोने लगता है। वही शिशिर कुमार जो हमेशा होटल, सिनेमा, थियेटर, रेसकोर्स आदि में ही व्यस्त रहते थे, विवाहितों की परतंत्रता पर हँसी उड़ाया करते थे, विवाहित हो जाने पर इतना अधिक बदल गये हैं कि उन्हें उनके स्वभाव से पहचानना भी मुश्किल हो जाता है।

दफ्तर में छुट्टी होने के बाद वह वहाँ एक क्षण के लिये भी नहीं रुक सकते बल्कि अक्सर देखा गया है कि वह समय से पूर्व ही दफ्तर छोड़ देते हैं। रास्ते में रुक कर किसी परिचित से बात करना भी उनके लिये दुष्कर हो जाता है। बिना पत्नी के सिनेमा अथवा क्लब भी जाना उन्हें अच्छा नहीं लगता। वही शिशिर कुमार जो विवाहितों की इतनी खिल्ली उड़ाया करते थे, विवाहित होने पर इतना अधिक बदल जायेंगे कौन जानता था।

शिशिर कुमार का उदाहरण डा० व्यास के हृदय में अच्छी तरह से बैठ गया। जब उनके विश्रृंखल व्यक्ति में इतना शीघ्र परिवर्तन हो सकता है तब राममोहन में

भी क्यों नहीं सुधार हो सकता। अपने पुराने अनुभव के आधार पर उन्होंने एक नई समस्या का हल कर लिया। जब हमारे सामने कोई नई परिस्थिति आती है तो हम परिस्थिति के विभिन्न पहलुओं को अलग-अलग करके उनका निरीक्षण करते हैं। हम अपने पुराने अनुभव तथा इस नवीन अनुभव की समानता को जानने की चेष्टा करते हैं और इसी समानता के आधार पर अनुमान की उत्पत्ति होती है। जिस भी अनुमान से हमें पूर्णतः संतोष प्राप्त होता है वही हमारी समस्या को हल करता है।

उसी दिन से डाक्टर व्यास ने अपने मित्रों में राम-मोहन के विवाह की चर्चा करनी प्रारंभ कर दी। उन्हें अपने लडके के लिए कोई सुन्दर लड़की की आवश्यकता थी जो उसे अपने वश में कर सके। आज कल लड़का की कीमत तो यों ही बढ़ी हुई है फिर पढ़ा-लिखा होने पर तो कीमत और भी दूनी हो जाती है। लड़की लाख पढ़ी-लिखी और सुन्दर हो किन्तु कुरूप से कुरूप लड़के के सामने भी वह तुच्छ होती है, उसकी कोई कीमत नहीं होती। अच्छी से अच्छी लड़की भी अपने माता पिता के लिये भार स्वरूप होती है जब कि कुरूप से कुरूप लड़का भी अपने घर का चिराग रोशन करने वाला होता है।

यह हमारे समाज की सबसे बड़ी कमजोरी है जो एक वर्ग का दूसरे वर्ग की ओर से कितना अधिक हीन होना प्रकट करता है। इसका प्रमुख कारण दोनों वर्ग के लोगों को समान अधिकार न देना ही है। बड़े बड़े नेता भी इस ओर ध्यान नहीं दे पाते। हम उन्हें इसके लिये दोष नही देते, देश के समक्ष कितनी ही कठिनाइयाँ हैं, उन सबको सुलझाने में ही वे इतने अधिक व्यस्त रहते हैं कि उन्हें समाज की ओर ध्यान देने का अवकाश बहुत कम मिल पाता है। ये सब समस्यायें तो ऐसी हैं जिन्हें हम स्वयम् सुलझा लेना चाहिये। यदि हम चाहें कि सरकार घरेलू झगड़ों में भी हस्तक्षेप करे तो यह कहाँ तक उपयुक्त होगा ? इन सब छोटी मोटी चीजों का सुधार हमें स्वयं करना चाहिए।

जो भी हो डा० व्यास के मित्र जानते हुए भी कि राममोहन एक अनियन्त्रित व्यक्ति है उसके लिए एक से एक श्रेष्ठ कन्या का प्रस्ताव लेकर आने लगे। चार पाँच दिनों में ही चित्रों के ढेर लग गये, कितनी की ही आँखे प्यासे चातक के समान इस घनघोर घटा की ओर एक टक ताक रही थी, देखें बादल कहाँ बरसता है ?

डाक्टर व्यास दवाखाने में आकर बैठे ही थे कि

ये ने मेज पर एक लिफाफा लाकर रख दिया।
र साहब ने एक बार डाकिये की ओर देखा और
लिफाफे की ओर। तब तक डाकिया एक लम्बा सा
र बोल जा चुका था। डाक्टर साहब लिफाफा खोल-
त्र पढ़ने लगे।

पत्र समाप्त होते होते उनका हृदय पूर्ण रूप से प्रफु-
हो उठा था। भगवान् जब देता है तो छप्पर फाड़कर
है। उन्होंने दो चार बार पत्र पढ़ने के बाद उसे पुनः
प्रकार हिफाजत के साथ लिफाफे में रख दिया और
अट्टहास से समस्त दवाखाना गूंज उठा। पत्र प्रिय
जी की पत्नी का था।

उनकी आँखों के आगे आज से दो वर्ष पूर्व का चित्र
उठा। जिस समय वह प्रिय प्रवास जी के घर गये
र्व प्रथम किरण ही मिली थी। उस समय वह उसे
न भी नहीं सके थे, कितनी बड़ी हो गई थी वह।
ो भोली और सुन्दर मालूम हो रही थी, इतने वर्ष
तर में कितना परिवर्तन हो गया था उसमें। जिस
प्रिय प्रवास जी 'एलाहाबाद हाई स्कूल' में हेड-
र थे वह कितनी छोटी-सी थी। कोई भी दिन ऐसा
ता था जब वह और राममोहन एक दूसरे की

शिकायत लेकर उनके सामने न आते। दोनों में हमेशा महाभारत मचा रहता। आज लड़ाई है तो कल पुनमेल, यह तो नित्य प्रति का खेल था। डा० व्यास की किरण उसी समय से बहुत पसन्द थी। उसकी वाणी में दूसरों को जीत लेने की अभूतपूर्व शक्ति थी। उस दिन जब डा० व्यास पहुँचे तो उन्होंने पूछा—

'प्रिय प्रवास जी कहां है ?'

'जी स्कूल गये हैं, आते ही होंगे। आइये अन्दर बैठिये, आप कहाँ से आ रहे है ?'

'अच्छा, कौन ! तुम किरण ती नही हो ?'

'जी, मै ही किरण हूँ।'—किरण ने कुछ लजाते हुए कहा।

'ओ, किरण। अरी पगली मै तो तुझे पहचान भी नहीं सका, कितनी बड़ी हो गई है तू। मुझे पहचाना ? कौन हूँ ? नहीं पहचानती होगी, कैसे पहचानेगी तब तो तू बहुत छोटी थी, इतने साल बीत गये देखे हुए। मै तुम्हारा वही 'डाक्टल चचा' हूँ। पहचानी ? राममोहन जब भी तुझे तंग करता था तू मुझी से आकर शिकायत करती थी।'

एक दिन खाते समय डा० व्यास ने प्रिय प्रवास जी

पत्नी से कहा—'भाभी, किरण को तुम मुझी को करते
। इसे अपनी बहू बनाऊँगा। राममोहन इसे पाकर बहुत
ा होगा, अब तो वह भी बी० ए० में पढ़ रहा है दो
ल में एम० ए० में चला जायगा। आप भी कितनी
ग्यवान हैं जो ऐसी सुन्दर लड़की भगवान ने आपको
है। मालूम होता है पूर्व जन्म में आपने जरूर कोई
ुत बड़ा पुण्य किया था।' किरण के गाल लज्जा से
ल हो गये थे, उसने सर नीचे झुका लिया।

किरण की माँ नें कहा—'रोकता ही कौन है आपको,
ा तो मैंनें बचपन से ही आपके सुपुर्द कर दिया है।
ब जी चाहे ले जायें।'

उसके बाद किरण एक क्षण के लिये भी वहाँ न
रु सकी और अपने कमरे में भाग आई।

'कितनी लजीली है।'—कह डाक्टर व्यास जोर से
स पड़े।

प्रिय प्रवास जी और उनकी पत्नी भी अपनी मुस्क-
ाहट नहीं दबा सके।

डा० व्यास के समक्ष किरण के छाया चित्र नाचने
गे, उन्हें रह-रह कर किरण का ध्यान आ रहा था।

- -

कहीं प्रारंभ में ही उन्हें किरण का ध्यान आया होता तो फिर क्यों इतनी उलझन उठानी पड़ती, इतने लोगों से कहना पड़ता। ऐसी लड़की को पाकर उनका घर स्वर्ग बन जायगा और राममोहन; वह भी आदमी बन जायेगा, उसके भाग्य खुल जायेंगे। किरण को पाकर राममोहन अवश्य ही सुधर जायेगा।

उन्हें दराज में पड़ी उन दो चार चित्रों से घृणा हो उठी जो अपने भाग्य की आजमायश कर रही थी। वे भी राममोहन के ही समान होंगी। कोई बी० ए० पास थी तो कोई बी० ए० में पढ रही थी, कोई तबला बादन सीख रही थी तो कोई सितार। किसी को डान्सक्लब में गोल्ड मेडिल मिला था तो किसी को टेनिस कोर्ट में रजत पदक। खूब जोड़ा मिलता, एक तो नितलोकी दूजे नीम चढ़ी। इधर राममोहन कालेज की लड़कियों को बाहुपाश में जकड़े सिनेमा पहुँचता, उधर वह भी किसी पार्टनर के साथ टेनिस कोर्ट। यदि किसी की मुसीबत बढती तो डा० व्यास की। धन और मान-मर्यादा दोनों ही की क्षति होने का भय था।

उन्होंने एक बार इन तसवीरों को उपेक्षा भरी दृष्टि से देखने के बाद एक मोटी सी किताब में दबा कर रख

दिया। इसी समय कम्पाउण्डर ने कमरे में प्रवेश करते हुए कहा—'बाहर मरीज बहुत देर से प्रतीक्षा कर रहे हैं।'

वे एक दम से चौंक से पड़े—'क्या कहा ?'

'बाहर मरीज बड़ी देर से प्रतीक्षा कर रहे हैं।'

'अच्छा एक एक करके भेजो।'

'बहुत अच्छा।'—कह कम्पाउण्डर कमरे से बाहर हो गया। समुद्र के लहर के समान एक एक करके मरीज आने जाने लगे। आज डाक्टर साहब बहुत ही खुश मालूम हो रहे थे। एक बूढ़े मरीज की नब्ज देखते हुए उन्होंने कहा—'बाबा जवान बीबी से शादी कर लो तो जरूर अच्छे हो जाओगे।'

एक जवान मरीज को देखते हुए बोले—'बीबी बहुत मोटी होगी तभी इतने दुबले पतले हो।' मरीज ने शर्म से सर झुका लिया। आज प्रत्येक ने अनुभव किया कि डाक्टर साहब बहुत ही खुश हैं, इतने हँसमुख और खुश-हाल वे कभी और नहीं थे। इतने शुष्क प्रकृति के व्यक्ति में एक दम से इतना महान परिवर्तन होना वास्तव में आश्चर्य की बात थी।

किसी प्रकार मरीजों का ताँता टूटा और डाक्टर साहब को राहत मिली, उन्होंने मुक्ति की साँस लेते हुए कम्पाउण्डर से पूछा—

'अब तो कोई नहीं है ?'

'जी नहीं।'

'अच्छा, अब जो भी आये उसे थोड़ी देर इन्तजार करने को कहना, मुझे कोई भी मत छेड़ना।'

'अच्छी बात है।'—कह कम्पाउण्डर बाहर के कमरे में चला गया। डाक्टर साहब सोचने लगे—तो क्यों न अपनी स्वीकृति लिख भेजूं, पर एक बार राममोहन की भी तो राय जान लेनी चाहिए। लेकिन उसके स्वीकृति की भी क्या आवश्यकता है, यदि वह इसी योग्य होता तो उन्हें इतनी चिन्ता ही क्यों उठानी पड़ती ? किन्तु फिर भी एक बार पूछ लेने में हर्ज ही क्या है ? लेकिन क्यों ? हो सकता है उसे यह प्रस्ताव न स्वीकार हो पर इसके माने यह तो नहीं कि उसकी शादी ही न की जाय। मैं राममोहन का पिता हूं, उसे मेरी इच्छा के अनुकूल ही चलना होगा। मै उससे बड़ा हूँ, उससे अधिक संसार का अनुभव किया है। मुझे भले बुरे की अधिक पहचान है।

वह तो अभी एक नये खिलाड़ी के समान है। मुझसे अधिक विचार विनिमय करने की क्षमता उसमें कहाँ हो सकती है। यह सब कुछ नहीं, मैं व्यर्थ ही इन सब उलझनों में अपना समय गवां रहा हूँ, जो कुछ करना है उसमें देर करने से लाभ ? बस, मुझे आज ही प्रियप्रवास जी को लिख देना चाहिये, 'मुझे आपका सम्बन्ध स्वीकार है और शीघ्र से शीघ्र जब भी विवाह करना चाहें कर सकते हैं, मुझे किसी भी प्रकार की आपत्ति नहीं होगी।' फिर मैं बहुत पहले से ही प्रियप्रवास जी की पत्नी को वचन देता आया हूं कि किरण मेरी ही बहू बनेगी। मुझे अब कुछ और अधिक नहीं सोचना है, मैंने हर पहलू पर अच्छी तरह सोच लिया है। राममोहन किरण के पैर की धूल तक नहीं बन सकता और उन्होंने कलम उठाकर प्रिय-प्रवास जी की पत्नी को 'हाँ' लिख दिया। 'मुझे यह रिश्ता मंजूर है, जब भी चाहें सुविधानुकूल विवाह की तिथि तय कर लें। कुण्डली आदि पर मैं विश्वास नहीं करता, यदि कुण्डली के दो चार ग्रहों में अन्तर भी मिले तो उसे पण्डित जी को दो चार रुपये देकर ठीक कराया जा सकता है। अच्छी दक्षिणा पाने पर वह कोई न कोई विधि बता ही देंगे। इसीलिए पत्र के साथ ही राममोहन की

कुण्डली भी भेज रहा हूँ, कुण्डली क्या है एक साधारण पढ़े लिखे ब्राह्मण देवता ने दक्षिणा के लालच में जबरदस्ती राममोहन के पैदा होने पर इसे बना डाला था वही पड़ी सड़ रही थी।'—इसके बाद उन्होंने सन्तोष की एक गहरी साँस ली।

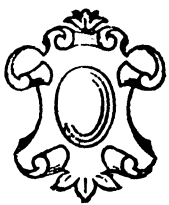

सात

जब राममोहन ने अपने पिता के इस आकस्मिक निर्णय को सुना, चौंक सा गया। वह जान गया अवश्य ही किसी दिन उसके पिता ने उसे संदिग्ध अवस्था में देखा है तभी एकाएक ऐसा निर्णय कर बैठे हैं अन्यथा वे उन व्यक्तियों में से नहीं हैं जो दूसरों के कहे पर विश्वास कर जाते हों। उसे यह भी अच्छी तरह से मालूम था कि उसके पिता का एक बार बढ़ा हुआ कदम फिर पीछे नहीं हटता। न तो उन्हें बातों में बहलाया जा सकता था न उनकी आज्ञा का विरोध ही किया जा सकता था। यद्यपि उसने किरण को बचपन में ही देखा था फिर भी जानता था किरण कोई साधारण लड़की नहीं है। वह एक पढ़ी-लिखी, सुन्दर तथा स्वस्थ युवती है जिसमें किसी भी गुण का अभाव नहीं पाया जा सकता। वह उसे पसन्द भी करता था। बचपन उसी के साथ खेल-कूद में बीता था अतएव पसन्दगी अथवा

नापसंदगी का कोई प्रश्न ही नही उठा था। अगर कोई बात थी भी तो इतनी शीघ्र विवाह के चक्कर में पड़ अपनी स्वाधीनता खो देना। वह नहीं चाहता था कि किसी एक देवी का पुजारी बन उसकी अर्चना में समस्त जीवन बिता दे। वह उन व्यक्तियों में से था जो दो-चार दिन की जिन्दगी को हँसी खुशी में बिता देना चाहते हैं, नित्य नई फुलवारी से नये नये फूलों को चुनना जानते हैं। साथ ही साथ उसे यह भी मालूम था कि पिता को रुष्ट कर वहाँ एक क्षण के लिये भी नही रुका जा सकता, उसके पिता उसका रहना दुर्लभ कर देंगे। फिर यह सब ठाट बाट कहाँ से आयेगा? अन्त में उसने विवाह की स्वीकृति देने का ही निश्चय किया। पुत्र की स्वीकृति पा पिता के हृदय पर बहुत प्रभाव पड़ा, वह वात्सल्य से विमोहित हो उठे। उन्होंने सोचा-लड़का लाख बुरा क्यो न हो है तो मेरा ही। उसमें कितने भी दुर्गुण क्यो न हो, कम से कम मेरी आज्ञा का उलंघन तो नहीं करता। फिर मेरे कथन को वह काट भी कैसे सकता है, किरण जैसी लड़की के लिए ना कर ही कौन सकता है? जो भी हो पिता के व्यक्तित्व के आगे पुत्र का व्यक्तित्व कोई भी क्षमता नहीं रखता। उन दोनों के व्यक्तित्व में कभी भी

समानता नहीं हो सकती चाहे लड़का लाख बड़ा क्यों न हो जाय।

व्यक्तित्व में संवेदना, भूल प्रवृत्ति, उद्वेग, प्रत्यक्ष-ज्ञान, कल्पना, स्मृति, बुद्धि तथा विवेक सभी का समावेश होता है। इन सब शक्तियों से मिलकर ही व्यक्तित्व का निर्माण होता है। व्यक्तित्व के अनेक अंग होते हैं; व्यक्ति का रूप, बुद्धि, उद्वेगात्मक जीवन, चरित्र तथा मानसिक दृढ़ता और सामाजिकता। व्यक्तित्व के रूप के नाम पर राममोहन दुबला पतला, सुन्दर, चंचल युवक था और डा० व्यास हृष्ट-पुष्ट, गंभीर एवं गौरव की झलक लिए हुए।

बुद्धि के नाम पर डा० व्यास राममोहन से कहीं अधिक विचारशील थे। दोनों के उद्वेगात्मक जीवन में भी बड़ा अन्तर था। पिता उदास प्रकृति के थे तो पुत्र चंचल। इस प्रकार पिता पुत्र दोनों के ही व्यक्तित्व में ज़मीन आसमान का फर्क था। विवाह तय हो चुका था, कुण्डली आदि का भी मिलान हो चुका था। जो दो चार ग्रहों का अन्तर निकला उसे पण्डितों ने समुचित दक्षिणा पाकर सुधार लिया। जब मनुष्य के लिये आकाश पर विजय प्राप्त करना भी संभव हो गया तब भाग्य की दो चार

लकीरों में भी उलट पलट कर देना कोई कठिन नहीं। सब कुछ ठीक हो चुका था, विवाह की तिथि भी निकल आई और इस प्रकार दोनों जगह की समस्या का हल हो गया।

इधर राममोहन की बिलकुल एक दरिद्र सी दशा हो गई थी। ज्यों ज्यों विवाह की तिथि निकट आती जाती वह उन दरिद्रों के समान ठूँस ठूस कर खाये जा रहा था जो फिर कहीं न मिले की आशंका मे पीड़ित रहते हैं। वह अच्छी तरह जानता था कि विवाह जीवन में एक रोड़े के समान होता है, उसके बाद मनुष्य को अपनी स्वच्छन्दता खोनी ही पड़ती है। अतएव जो कुछ भी वह करना चाहता है उसे विवाह के पूर्व ही कर लेना चाहिये फिर मौक़ा मिले ना मिले। उधर डाक्टर व्यास विवाह की तैयारी में जुटे थे और इधर राममोहन अपनी तृष्णा बुझाने में। एक दिन काफी हाउस में राममोहन का हाथ दबाते हुए मिस शोभा ने कहा—'राममोहन, मैरिज के बाद तो हम सबको भूल ही जाओगे, क्यों मैं ठीक कहती हूँ न ?'

'नो, डार्लिंग।'

'तुम्हारी स्वीटी आबजेक्ट नही करेगी ?'

'आइ विल नेवर केयर फार हर आब्जेक्शन ।'

'तो, यू बिल रिमेन सेम ?'

'सर्टेनली सो ।'

'लेकिन डियर मुझे यह आइडिया कतई पसन्द नहीं।'

'लेकिन मुझे तो पसन्द है ।'

'तुम बहुत सेल्फिश नेचर के हो ।'

'यह तो यूनिवर्सिटी भर की लड़कियाँ जानती हैं'

'लेकिन इतना सेल्फिश होना ठीक नहीं ।'

'तो तुम कौन सेल्फिश नेचर की नहीं हो ।'—राम-मोहन ने ताना मारते हुए कहा ।

'कौन कहता है मैं सेल्फिशनेचर की हूँ ।'—शोभा ने बिगड़ कर कहा । 'हाँ इसे सेल्फिशनेचर कैसे कहोगी, यह तो त्याग है । जिसके पास पैसा हो उसके साथ घूमना फिरना कैसे सेल्फिशनेचर में आ सकता है ?'—राममोहन ने इत्मीनान के साथ सिग्रेट के राख को एस्ट्रे में झाड़ते हुए कहा ।

मिस शोभा अपना यह अपमान नहीं सह सकी और एक झटके के साथ 'यू क्रूयेल एण्ड मीन फेलो' का तोहफा छोड़ काफी हाउस से बाहर हो गईं । राममोहन रोकता ही रहा किन्तु वह नहीं रुकीं । अन्त में राममोहन मिस

शोभा की कुर्सी खींच उस पर पैर फैला आराम के साथ बैठ गया। एक उपेक्षा की हँसी के साथ उसके मुख से निकल पड़ा—'चली थी हमें शिक्षा देने, क्या चोट दी है कि जन्म भर तक मात रहेंगी।'

इसके बाद वह अधिक देर तक वहाँ अकेले न रुक सका और काफी का आर्डर कैंसिल कर अन्य पार्टनर की खोज में निकल पड़ा।

इधर जब से डा० व्यास की स्वीकृति आ गई है, किरण के घर में धूम सी मच गई। जब प्रियप्रवास जी ने स्वयम अपनी आँखों से सब कुछ पढ़ लिया उन्हें अपनी पत्नी की विजय पर हार माननी पड़ी। उस दिन से किरण की मां का बड़ा बोलबाला हो गया। विवाह की तैय्यारी तेजी के साथ होने लगी। विवाह की तिथि बहुत नजदीक की निकली थी इसलिये जल्दी करनी पड़ रही थी।

विवाह की स्वीकृति के साथ ही किरण के पढ़ाई का क्रम भी रोका जा चुका था, पहले तो किरण इसका कुछ भी रहस्य न जान सकी किन्तु बाद में उसे सब कुछ पता लग गया। वही राममोहन जिसके साथ बचपन में वह गुड्डे गुड्डी का खेल खेला करती थी, उसका दूल्हा बनेगा। कितने सुन्दर हैं उसके पति, उसके स्वसुर भी

कितने मृदुल स्वभाव के है। लेकिन वह अब उन्हे क्या कह कर पुकारेगी, डाक्टर चचा थोड़े ही कहेगी ? धत्, कितनी पागल है वह। और वह, उन्हें क्या कहेगी ? कुछ भी नही—एक दिन उसने उनकी कैसे शिकायत की थी, 'डाक्टर चचा, देखो राममोहन मेरी चोटी पकड़ कर घसीटता है, कहना है तेरा दूल्हा काना होगा।'

' हिश ! वह तो बचपन की बातें थी, तब वह कितनी छोटी भी तो थी। अब तो वह उन्हें कहेगी—स्वामी, नाथ !

किरण की कल्पना के चादर पर रंग-विरंगे फूल बिखर रहे थे। वह अपने कल्पना के संसार में एक नई सृष्टि का निर्माण कर रही थी। किरण को अपने विवाह की बात सुन जहाँ थोडा सुख हुआ वहाँ थोड़ा दुःख भी। उसे अपनी पढ़ाई से बहुत मोह था, वह चाहती थी कि कम से कम बी० ए० अवश्य पास कर ले किन्तु अब यह उसे असंभव प्रतीत हो रहा था। दूसरा दुःख था, 'हिमालय छूट जायगा।' नहीं वह हिमालय को नही छोड़ सकती, उसका क्या होगा ? जब वह सुनेगा—किरण भी उसे छोड़ कर जा रही है, उसके हृदय के टुकड़े टुकड़े हो जायेंगे। हिमालय उसे कितना अधिक चाहता है, वह भी

और शक्तिवान हो किन्तु समाज के प्रति विद्रोह करने पर उसे विशेष साहस और शक्ति की आवश्यकता होती है। उसे और हिमालय को लेकर एक बहुत बड़ा विवाद खड़ा हो सकता है। जो भी हो मुझे अपने मन की चंचलता को दबाना ही पड़ेगा, हमें अपने कर्तव्य का पालन करना ही होगा। उसी में मुझे संतोष होना चाहिए। उसी में मेरा सच्चा प्रेम झलक सकेगा और उसकी आँखों में आँसू की बूँदें उमड़ आईं।

एक दो बार किरण ने श्याम को हिमालय के घर भेजा किन्तु जब भी श्याम लौट कर आया उसने उत्तर दिया—'दरवाजे पर ताला लगा है, वह कहीं गये हैं।'

अब किरण को हिमालय से एक प्रकार की चिढ-सी होने लगी थी, जाने वह क्या समझता है अपने को, कितना गरूर हो गया है उसे? मैं उसके यहाँ दो-चार बार हो आई किन्तु वह मेरे यहाँ एक बार भी नहीं आया। उसे मेरा तनिक भी ध्यान नहीं, स्वाभिमान की सीमा कितनी बढ गई है उसमें। यदि उसे घमण्ड है कि वह एक बहुत बडा कवि है तो उसे यह भी नहीं भूलना चाहिये कि उसे हमी लोगो ने कवि बनाया है। उसने मेरे विवाह की

चर्चा सुनी ही होगी, जब पूरा का पूरा मोहल्ला मेरे विवाह के विषय में जानने लगा है तो क्या उसे नही मालूम होगा ? हो सकता है उसके हृदय को ठेस लगी हो किन्तु फिर भी वह कितना निर्मोही है, एक दिन आकर अपनी सूरत तक नही दिखा गया। यदि वह नही आता तो मैं भी अब उसके यहाँ नही जाऊँगी, उसे भूल जाने की कोशिश करूँगी। इसी समय श्याम ने दौड़ कर आते हुए कहा—'दीदी खिड़की से देखो हिमालय भय्या इक्के पर अपना सामान लादे कही जा रहे है।'

'हिमालय भय्या जा रहे है ?'

'हाँ देखो न खिड़की से।'—कह श्याम खिड़की से झाकने लगा।

किरण ने भी झांक कर देखा—एक इक्के पर बड़ी सी गठरी और टीन का सन्दूक लादे हिमालय सर झुकाये चला जा रहा है। वह उसे एकटक देखती रही किन्तु शीघ्र ही इक्का सड़क की मोड़ पर ओझल हो गया। किरण ने लाख प्रयत्न किया कि उसकी पलकें न भीगें किन्तु फिर भी वे भींग ही गईं। किरण ने शीघ्रतापूर्वक उन्हें अपने आँचल के छोर से पोंछ डाला।

'हिमालय भय्या कहाँ जा रहे हैं दीदी ?'

'तुमने नहीं पूछा ?'

'पूछा तो था।'

'क्या कहा उन्होंने ?'

'उन्होंने कहा अब हम बहुत दूर जा रहे है, यहाँ हमें अच्छा नही लगता।'

'मुझे नही पूछा ?'

'पूछा था ?'

'क्या ?'

"तुम्हारी दीदी अच्छी हैं न ? उनसे मेरा नमस्ते कहना।'

'फिर ?'

'मैंने कहा दीदी की शादी में नही आवोगे ? तब उन्होंने कहा तुम्हारी दीदी नही चाहती कि मै उनकी शादी में आऊँ। मैंने लाख कहा अभी दीदी को बुला लाता हूँ थोडा ठहर जावो पर वह नहीं रुके और जब तक मै यहाँ आऊँ उनका इक्का आगे बढ गया। दीदी, वह रो मे रहे थे, सच में, तुम्हें जरूर याद करते रहे होंगें।'

'अच्छा जा खेल, अभी से ऐसी बातें नहीं करते श्यामू।'

'दीदी !'

'क्या ?'

'जीजा जी से कह कर हिमालय भैय्या को अच्छी सी नौकरी दिला देना । उनके पास तो दो दो मोटरें हैं ।'

किरण का हृदय यह आघात न सह सका और वह खिड़की बन्द कर अपने पलंग पर लेट गई । श्याम दीदी की गंभीर मुद्रा को देख वहाँ और अधिक न ठहर सका और बाहर जाकर खेल में जुट गया । उस नासमझ बालक को क्या मालूम था कि उसकी इस छोटी सी ही बात में कितनी बड़ी चोट छिपी थी, उसने हिमालय का कितना अपमान किया था । इसी समय किरण की मां ने कमरे में प्रवेश करते हुए कहा—'किरण ?'

'हाँ माँ ।'—किरण ने अपने को सम्हालते हुए कहा ।

'कुछ सुना, हिमालय शहर छोड़कर चला गया ।'

'सुना है, अभी अभी श्याम ने बतलाया है ।'

'देखो, कितना घमण्डी निकला । जाते समय तेरे पिता से कौन कहे तुझसे तक नहीं मिल कर गया । इतना घमण्ड ? कलका भुक्कड छोकड़ा, कवि बनता है । बाप को खाया, माँ को खाया, सारा का सारा वंश तबाह

कर डाला। अभागा कहीं का, चला था हमारे घर में भी आग लगाने। दाने दाने को न तरसा तो कहना'

'नहीं माँ ऐसी बात नहीं है।'

'तो और क्या है? सोचा शादी व्याह का घर है, काम धाम करना पड़ेगा, कुछ लेना देना पड़ेगा—बस भाग खड़ा हुआ। इसीलिये कहती थी ऐसों को मुँह न लगाया कर, जाने क्या टोना किये जा रहा था मेरी बेटी पर।'—कहती हुई किरण की माँ बाहर चली गईं। किरण तकिये में सिर छिपा सिसक पड़ी।

आठ

उस दिन के बाद से किरण हिमालय के यहाँ फिर कभी न जा सकी। एक तो यों ही हिमालय का हृदय अशान्त रहने लगा था दूसरे किरण की खामोशी ने उसके हृदय में एक हलचल सी पैदा कर दी। जाने किरण उसके विषय में क्या सोचती होगी, कही उसने उसके कहे का बुरा तो नही मान लिया ? हो सकता है उसे यह बात इतनी अधिक न चुभती यदि किरण अपने आने जाने का क्रम न तोड़ती। अवश्य ही उसे उसकी बात लग गई होगी, उसे उसके चरित्र पर सन्देह होने लगा होगा। वह अवश्य ही सोचने लगी होगी कि उसमें अब संयम का अभाव होने लगा है। उसे मालूम हो चुका था कि किरण का विवाह होने जा रहा है, विवाह की तिथि भी निश्चित हो चुकी है और वह शीघ्र ही किसी अन्य की हो जायेगी। अब उसका उस पर किसी भी प्रकार का अधिकार नहीं रह जायेगा। अधिकार तो पहले भी नहीं

था किन्तु जो कुछ भी हक़ था वह भी अब नहीं रहेगा। उसका आहत हृदय विक्षिप्त हो उठा।

किरण ने कभी हिमालय को एकाकीपन का आभास नहीं होने दिया, वह हमेशा उसके सुख दुख में उसका हाथ बटाती, उसकी सहायता करती किन्तु यह सब कुछ भी अब न हो सकेगा। वह जितना ही किरण को भूलने की चेष्टा करता किरण उसके निकट आती जाती। उसने इन सब से बचने के लिए एक सरल उपाय ढूंढ निकाला। कहीं वह किरण के जीवन में हलचल न बन जाये इसलिये उसने कहीं दूर चले जाने का निश्चय किया। इसके पूर्व कि किरण किसी नये जीवन में पदार्पण करे वह यहां से कहीं दूर चला जाना चाहता था उसने निश्चय कर लिया, उसे कहीं जाना ही होगा, वह यहाँ अब और अधिक नहीं ठहर सकता और एक दिन वह सचमुच लखनऊ छोड़ कहीं अन्यत्र के लिए चल पड़ा।

जाने के पूर्व एक बार उसका हृदय मचल पड़ा—कम से कम एक बार तो किरण से मिल ले। आगे फिर कभी मिलन हो न हो, कौन जानता है? किन्तु साहस न हुआ कि किरण के समक्ष जा विदा की भीख माँग सके। वह उसे अपने हृदय की कमजोरी से अवगत नहीं कराना

चाहता था। अन्त में हृदय में एक गहरी टीस और व्यथा लिये वह स्टेशन की तरफ चल पड़ा।

जिस समय रेलवे स्टेशन पर पहुँचा उस समय तक भी वह नहीं सोच सका था कि उसे कहाँ जाना है। अन्त में उसने बम्बई जाने का ही निश्चय किया, बम्बई की गाड़ी भी तैयार खड़ी थी। उसने सोचा जहाँ पैंतीस लाख व्यक्तियों का भरण पोषण हो रहा है वहाँ क्या उसके पेट भरने भर को भी काम न मिल सकेगा। वहाँ से अनेक पत्र निकलते हैं काम धाम के भी बहुत से ज़रिये हैं, कहीं न कहीं कोई न कोई काम मिल ही जायगा। सबसे बड़ी बात वह किरण से इतनी दूर हो जायगा कि वह कभी भी उसके जीवन में हलचल नहीं बन सकता। गाड़ी छूटने में अभी आध घंटे का समय था, उसने अपनी जेब देखी, घर की बहुत सी चीज बेचने पर भी वह डेढ सौ रुपये मात्र ही एकत्रित कर सका था। उसने दूसरे दर्जे के टिकट घर की खिड़की में हाथ बढ़ा दिया—'एक टिकट बम्बई।' उस समय ट्रेन में केवल तीन ही डिब्बे होते थे। पहला दर्जा पूजीपतियों तथा उच्चश्रेणी के सरकारी कर्मचारियों के लिये, दूसरा दर्जा मध्यमश्रेणी वालो के लिये, तीसरा दर्जा गरीब शोषित जनता और किसानो

के लिये। पहले तो हिमालय ने तीसरे दर्जे का ही टिकट लेने का निश्चय किया, किन्तु अन्त में कुछ सोचकर उसने दूसरे दर्जे का टिकट ले लिया।

गाड़ी ने सीटी दी। धीरे धीरे जी० आई० पी० मेल लखनऊ स्टेशन से दूर होने लगी। हिमालय उसी दर्जे में बैठ गया जो सीधे बम्बई तक जाता था। उस कम्पार्टमेन्ट में कुल मिला कर आठ व्यक्ति ही बैठे थे जब कि उसमें बारह व्यक्तियों के बैठने का स्थान बना था। ऊपर की दो बर्थ जिन दो व्यक्तियों के लिये रिजर्व थी वह ऐन मौके पर किसी आवश्यक कार्यवश कम्पार्टमेन्ट से उतर कर वापस चले गये थे और वे सीटें अब भी खाली पड़ी थीं।

हिमालय की सामने वाली सीट पर ६ व्यक्ति बैठे थे और हिमालय की सीट पर केवल दो। एक वह स्वयं दूसरे एक थल थल मारवाड़ी सेठ। सामने वाली बर्थ पर सेठ जी इस प्रकार पैर फैला कर बैठे थे कि और कोई न बैठ पाये। सभी व्यक्ति वेशभूषा से बहुत ही उच्चश्रेणी के मालूम हो रहे थे। स्त्री बहुत ही खूबसूरत थी, वय में कोई बीस इक्कीस बर्ष की रही होगी। एक तो यों ही उसके पास सौन्दर्य का अभाव न था, उस पर पाउडर

और लिपिस्टिक ने उसे और भी अधिक आकर्षक बना दिया था। वे सभी आपस में घुल मिल कर बातें कर रहे थे। गाड़ी चले अभी थोड़ी देर भी नहीं हुई थी कि किसी ने हिमालय का ध्यान भंग करते हुए कहा—

मैं यहां बैठ सकता हूँ, आपको कष्ट तो न होगा ?'

'जी नहीं, बैठ जाइये।' कह हिमालय थोड़ा सरक गया। ओह, दैटइज ओ० के०, थैंक यू।'—कहते हुए उनमें से एक पुरुष हिमालय के बगल में बैठ गया।

'कहाँ जा रहे हैं आप ?'—युवक ने धन्यवाद स्वरूप प्रश्न किया।

'बम्बई।'

'वहीं रहते हैं ?'

'जी नहीं।'

'किसी काम की खोज में जा रहे हैं ?'

'अभी कुछ निश्चय नहीं किया है।'

'ना किस लिये जा रहे हैं ?'

'यों ही।'

'यों ही ! ओह ! वैसे आप करते क्या हैं ?'

'कुछ भी नहीं।'

'कुछ भी नहीं ! विचित्र बात है। कुछ न कुछ तो करते ही होंगे ?'

'जी वैसे तो कविता करता हूँ।'—हिमालय ने झुंझला कर कहा।

इस समय तक प्रत्येक का ध्यान हिमालय की ओर आकर्षित हो चुका था, सब उसकी ओर देखने लगे।

'आप कवि हैं ?'—सामने की बर्थ पर बैठे अन्य युवक ने प्रश्न किया।

'यदि कविता करने वाले को कवि कहा जाता है तो आप मुझे भी कवि कह सकते हैं।'

'क्या मैं आपका नाम पूछ सकती हूँ ?'—उस युवती ने प्रश्न किया।

'जी ! हिमालय !'

'ओह, आप ही हिमालय जी हैं। बड़ी सुन्दर कविता लिखते हैं। आप के गीत कितने मधुर होते हैं; मुझे आपसे मिलकर अति हर्ष हुआ।' कह युवती ने आँखें नीची कर लीं।

'क्या मैं आपका परिचय प्राप्त कर सकता हूँ ?'—हिमालय ने सभ्यतापूर्ण शब्दों में प्रश्न किया।

'आप हैं मिस मोहना। फिल्म जगत में पर्याप्त यश कमा चुकी हैं। आपने थोड़े ही समय पूर्व इस क्षेत्र में प्रवेश किया है। 'दूर किनारा', 'मन की बात' में आपका अभिनय अभूत पूर्व रहा है। आपको हिन्दी काव्य से विशेष प्रेम है।'—हिमालय के निकट बैठे युवक ने युवती से हिमालय का परिचय कराते हुए कहा। हिमालय ने दोनों हाथ बाँध अभिवादन किया।

'आप भी तो बम्बई जा रहे है ?'—युवती न प्रश्न किया।

'जी, हाँ।'—हिमालय ने उत्तर दिया।

'आप हमारे साथ काम करेंगे ?'

'आपके साथ ?'—हिमालय ने आश्चर्य के साथ पूछा।

'बात यह है मिस्टर हिमालय, कि आप अब स्वयम् फिल्म निर्माण के क्षेत्र में उतर रही हैं अतएव उसी में आपका सहयोग चाहती है।'—सामने बैठे अन्य युवक ने बात को साफ करते हुए कहा।

'मैं भला उसमें क्या कर सकता हूँ'

'क्यों नहीं कर सकते, हमें फिल्म में गीतो की भी आवश्यकता होगी, उसे आप पूरा करेंगे।'—युवती न

तुरन्त उत्तर दिया।

'किन्तु मैं फिल्म के योग्य गीत नहीं लिख सकता, आज के फिल्मी गीतों का स्तर बहुत गिरा हुआ है।'

'लेकिन हमारे चित्र में केवल ऊँचे स्तर की चीजों को ही स्थान दिया जायगा, फिर आप ही लोग के सहयोग से इसमें सुधार किया जा सकता है।'

'मैंने अभी नौकरी करने का निश्चय नहीं किया है, मुझे किसी की पराधीनता स्वीकार नहीं।'

'हमारे यहाँ आपको नौकरी नहीं करनी होगी, हमारा आपका भाईचारे का नाता होगा।'

'फिर भी सोच लूं।'

'सोच लीजिये अभी तो बम्बई काफी दूर है।'—कह मिस मोहना मुस्करा पड़ीं। हिमालय मौन हो खिड़की के बाहर देखने लगा। सेठ जी जो इस समय तक मिस-मोहना का नाम सुन कर जाग से उठे थे, बोल पड़े—आप ही मिस मोहना हैं?'

'जी!'—मिस मोहना ने उपेक्षा भरी दृष्टि से देखते हुए कहा।

'मैंने आपकी फिल्में देखी हैं।'—सेठ जी ने गिड़गिड़ा कर कहा।

'धन्यवाद ।'

'बहुत अच्छा अभिनय करती है आप ।'

'इसके लिये पुनः धन्यवाद ।'

'फिल्में कैसे बनती हैं ?'

'यह आप शूटिंग देखकर ही जान सकते है ।'

'क्या मैं फिल्म नहीं बनवा सकता ?'

सेठ जी के इस प्रश्न से सबके सब सहम से गये और उनकी ओर ध्यान पूर्वक देखने लगे ।

'मै फिल्म नहीं बनवा सकता ?'—सेठ जी ने पुनः प्रश्न किया ।

'क्यों नहीं ! जो भी रुपये लगाने की सामर्थ्य रखता हो वही फिल्म बनवा सकता है ।'—मिस मोहना ने कुछ नर्म पड़ते हुए कहा ।

'मैं रुपये लगा सकता हूँ, लेकिन एसी फिल्म चाहता हूँ जिससे खूब नाम हो जाये ।' सेठ जी ने कुछ तनते हुए कहा । सब चुप रहे ।

'कितना रुपया लगेगा एक फिल्म में ?'—सेठ जी ने प्रश्न किया ।

'सामाजिक चित्र डेढ़ लाख रुपये में भी बन जाते है और फिर पार्टनरशिप से भी काम होता है ।'—मिस

मोहना ने कहा ।

'इसमें कितने रुपये लगेंगे ?'

'यही पचास हजार ।'

'लाभ भी होता होगा ?'

'कई हजार का ।'

'तो मैं इतने रुपये लगाने को तैयार हूँ ।'

'फिर आपको हमारे पार्टनरशिप में काम करना होगा ।'– मिस मोहना ने कहा ।

'आप ही के भरोसे तो मैं रुपये लगाऊँगा'—कह सेठ जी होठों ही होठों मे मुस्करा पड़े ।

हिमालय ने जब सुना, सेठ जी पचास हजार रुपये तक फिल्म निर्माण कार्य में लगा सकते हैं, उसने एक बार सर से पैर तक उन्हें ध्यानपूर्वक देखा । वह सोचने लगा—जब इनके पास इतना पैसा है तब यह क्यों नही फर्स्टक्लास में चलते, इतनी ढिलाई से क्यो रहते हैं ? ये मारवाड़ी भी कितने विचित्र होते हैं, लाखों की सम्पत्ति होने पर भी ऐसे रहते हैं मानो कोई सौ रुपये मासिक पाने वाला क्लर्क हो । इनसे अधिक ठाठ से इनके कर्मचारी गण रहते हैं । यह क्या नहीं जानते कि रुपया उनके साथ नहीं जा सकता, क्यों नहीं उसका सदुपयोग किया जाय ?

लक्ष्मी की भी माया विचित्र है, वह जाती भी ऐसों के ही पास है जो उसे रखना जानते हों।

इसी समय सेठजी ने कहा—'तो ठीक है, तय रहा। मैं भी बम्बई में ही रहता हूँ, क्रैफर्ड मार्केट के पास हमारी बिल्डिंग है। मेठ रोलामल की बिल्डिंग पूछने से किसी से भी पता लग सकता है।'

'तो आपको हमारी फिल्म को फाइनेन्स करना स्वीकार है?'

'अब भी आपको शक रह गया है।'—कह सेठ रोलामल मुस्करा पड़े।

'लीजिए यह मामला भी सुलझ गया।'—सामने की बर्थ पर बैठे व्यक्ति ने मिस मोहना से कहा।

'यदि आपसे एडवान्स के रूप में कुछ माँगा जाय तो क्या आप कुछ दे सकते हैं?'—मिस मोहना ने प्रश्न किया।

'अभी तो मेरे पास केवल पाँच हजार रुपये ही होंगे।'

'आप भी कैसी बात करते हैं सेठ जी, यह तो मिस-मोहना आपसे हँसी कर रही थीं।'—हिमालय के बगल में बैठे युवक ने कहा और बड़ी जोर से हँस पड़ा। सबके

सब मुस्करा पड़े, मिस मोहना भी अपनी मु
छिपा सकीं। मिस मोहना की मुस्कराहट सेठ जी
घायल कर चुकी थी।

'अब आप भी अपना निश्चय बता दें तो बड़ी कृपा होगी, सब चीजें एक साथ तय हो जायेंगी।'—मिस-मोहना ने हिमालय की ओर घूमते हुए कहा।

'कैसे गीत लिखने होंगे ?'

'जैसे आप लिखते है, बस सिचुएशन मैं दूँगी।'

'जो भी आप ठीक समझें, नियत कर लें।'

'प्रथम चित्र में मैं आपको एक हजार रुपये दूंगी, आगामी चित्र में और भी अधिक हो जायगा।

'मुझे स्वीकार है।'—हिमालय ने बिना किसी हिचकिचाहट के कहा।

'चलिये यह भी प्राबलम हल हो गया।'—कह मिस-मोहना मुस्करा पड़ी। उनके साथी भी मुस्करा पड़े। हिमालय सोच रहा था जिन गीतों पर हिन्दी साहित्य उसे बीस रुपये भी नही दे पाता उसी के लिये उसे एक हजार रुपये मिल रहे है। कलाकारों की कितनी कीमत बढ़ जाती है फिल्मी जगत में। हिन्दी साहित्य तो उन्हें भूखो मरने से भी नहीं उबार पाता।

.। ज्यों गाड़ी भागती जा रही थी, उन व्यक्तियों .ा सेठ में घनिष्टता भी बढती जा रही थी। अनेक मुसाफिर चढ़ते उतरते रहे किन्तु झाँसी से पुन: उस डिब्बे में इन व्यक्तियों के अतिरिक्त और कोई नहीं रह गया। संभवत: उन दिनो बंबई में दगे फसाद की आशंका से लोगों ने बम्बई जाना स्थगित सा कर दिया था।

संध्या की रेखा काली पड़ चुकी थी, मुक्तागण से धवल नक्षत्र नीलाम्बर पर झिलमिला रहे थे। चन्द्र के उज्वल विजय पर मानो प्रकृति ने आशीर्वाद के फूल बिखेर दिये थे। बाहर काले काले वृक्ष छाया के समान भागते हुये प्रतीत हो रहे थे। गाड़ी विश्वविजयिनी की भाँति तीव्र गति से भागी जा रही थी, वायु का स्निग्ध झोका शरीर को स्फूर्ति प्रदान कर रहा था। सेठ जी ने सभी की बहुत खातिर की। डाइनिग कार से भोजन मँगा सभी को खिलाया और खुद भी खाया, उनके साथ की पूड़ियाँ बँधी की बँधी रह गईं। मिस मोहना ने अपनी कलाई पर बँधी घड़ी में देखा, ठीक दस बज गये थे। वह अँगड़ाई ले उसी सीट पर ढुलकने सी लगी। हिमालय को भी नीद आ रही थी, वह ऊपर की बर्थ खाली देख उसी पर सोने चला गया। उसके रिक्त स्थान

पर दूसरी बर्थ से एक अन्य सज्जन आकर बैठ गये और अन्य सज्जन दूसरी वाली अपर बर्थ पर जाकर लेट गये। इस प्रकार पर्याप्त स्थान हो जाने पर सबके सब आराम के साथ सोने का उपक्रम करने लगे। हिमालय बहुत थका था, आज जीवन में प्रथम बार उसे कुछ हलकेपन का आभास हुआ था अतएव वह शीघ्र ही गाढ़ी निद्रा में खो गया। धीरे धीरे कम्पार्टमेन्ट में पूर्ण रूप से शान्ति छा गई। बस गाड़ी के आवाज के अतिरिक्त और कुछ भी नही सुन पड़ रहा था।

जिस समय रात को एक बजे हिमालय की नींद टूटी, उसने देखा, उसे कई पुलिस वाले झकझोर कर उठा रहे है, डिब्बे के आगे एक अच्छी खासी भीड़ लगी है, बड़ा शोर गुल मच रहा है। गाड़ी किसी बड़े स्टेशन के प्लेटफार्म पर खड़ी थी, डिब्बा चारो ओर से पुलिस से घिरा पड़ा था। वह घबड़ा कर आँखें मीचता हुआ बर्थ से नीचे कूद पड़ा, पुलिस वालों ने उसका हाथ अच्छी तरह से जकड़ लिया। उसने देखा, निचली बर्थ पर सेठ रोलामल की लाश पड़ी है। उनकी गर्दन को खूब अच्छी तरह मजबूत कपड़े से कस कर बाँधा गया था, आँखें बाहर को निकल आई थी। वह चीख पड़ा, कितना विभत्स हो गया

था चेहरा। उसने डिब्बे में चारों तरफ नजर दौड़ाई मगर उसके सहयात्रियों में से कोई भी न था।

पुलिस ने उसे गिरफ्तार कर लिया। सेठ की भी लाश उतार ली गई। सबका सब सामान उतार लिया गया। सेठ के अधखुले सन्दूक को भी पुलिस ने अपने अधिकार में कर लिया। मेहतरों ने डिब्बे को साफ किया और गाड़ी इटारसी जंकशन छोड़ चली।

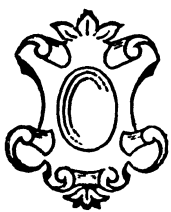

नौ

हिमालय की गिरफ्तारी और सेठ रोलामल की हत्या का समाचार प्राय: सभी हिन्दी अँग्रेजी के पत्रों में निकला। किरण ने भी पढ़ा और उसका हृदय रो पड़ा। वह जानती थी, हिमालय निर्दोश है और वह छूट भी जायेगा किन्तु फिर भी उसे इस समय किसी के सहायता की आवश्यकता थी, वह अकेले क्या कर सकेगा? वह तो इतना सीधा है कि अपनी सफाई भी ठीक से दे सके या नहीं, सन्देह है। उसका मन हिमालय के लिये मचल पड़ा, किन्तु वह बेबस थी, कुछ भी नहीं कर सकती थी। बस हृदय में वेदना छिपा मौन हो गई।

किरण हिमालय को जितना ही भुलाने का प्रयास करती, वह उसके निकट आता जाता। विवाह की तिथि भी नजदीक आती जा रही थी और अन्त में एक दिन उसकी माँग सिन्दूर से भर दी गई। डा० व्यास के लड़के की बारात लखनऊ भर की बारातों में अपना सिक्का

जमा गई थी। जिसने भी उस बारात को देखा यही कहा—

'अब तक लखनऊ में ऐसी बारात नही देखने को मिली थी।'

डा० व्यास ने बड़े हौसले के साथ अपने लड़के की शादी की। बारात धूम धाम के साथ आई और किरण को लेकर वापस लौट गई। किरण के पिता ने भी अपनी सामर्थ भर पर्याप्त व्यय किया किन्तु फिर भी आँधी और तूफान का अन्तर कौन मिटा सकता है। जिस समय प्रिय-प्रवास जी और उनकी पत्नी ने रुँधे गले से किरण को बिदा किया, किरण अपने को न सम्हाल सकी और फूट कर रो पड़ी।

किरण के चले जाने पर प्रिय प्रवास जी और उनकी पत्नी ने अनभव किया कि उसके सर का एक बहुत बड़ा बोझ उतर गया है, अब उन्हें कोई चिन्ता शेष नहीं रह गई है। किरण के चले जाने से घर सूना सूना सा लगने लगा था। लड़कियों का जीवन कितना विचित्र होता है। वे पराधीन होती हैं, यहाँ तक कि अपने माँ बाप की भी नहीं होतीं। माँ बाप अपनी लड़की को कितने प्यार से पालते हैं, किन्तु अन्त में उन्हें दूसरो के ही हाथ सौपना

पड़ता है।

राममोहन किरण जैसी सुन्दर स्त्री को पाकर अपनी पुरानी बातें भूलने सा लगा और अब उसके लिये किरण ही सब कुछ थी। डा० व्यास को अपने विजय पर हर्ष हो उठा, उन्हें अपने विचारशक्ति पर अभिमान होने लगा। राममोहन सा बालक इतनी शीघ्र सम्हल जायेगा, किसे आशा थी। वह किरण को पा बहुत सुखी थे, किन्तु वे इस सुख का अधिक दिन तक उपभोग न कर सके। एक दिन रात को जब वह किसी मरीज को देख कर वापस लौट रहे थे उनकी कार एक पेड़ से टकरा गई। उन्हें बहुत चोट आई, कार का शीशा चूर चूर हो गया, सारे बदन में काँच बिछ गये। चार पांच दिन तक कष्ट भोगने के बाद डा० व्यास इस संसार से सदा के लिए चेल बसे। अन्त समय तक भी वह किरण को नहीं भूल पाये मृत्यु के कुछ घंटे पूर्व अपनी समस्त सम्पत्ति किरण के नाम लिख गये जिसका पता केवल सर्जन और कुछ वकीलों को ही था। किरण ने उनकी जी जान से सेवा की किन्तु वह नही बच सके। घाव गहरे लगे थे।

मनुष्य का जीवन कितना क्षण भगुर होता है। यदि मनुष्य किसी पर विजय नहीं प्राप्त कर सका है तो वह

है मृत्यु। मृत्यु कब किसकी बिदाई का सँदेश लेकर आ जाये यह कोई नहीं जानता। कौन जानता था, अच्छे खासे, भले-चंगे डाक्टर साहब चार पांच दिनों बाद इस संसार से कूच कर जायेंगे। मृत्यु कोई न कोई बहाना लेकर आती है। डाक्टर साहब की मृत्यु मोटर के टकराने मात्र से हो गई और लड़ाई के मैदान में एक सैनिक को सीने में गोली खाने से भी मृत्यु नहीं हुई। यदि इसे भगवान की लीला न कहा जाय तो और क्या कहें ? वे शक्ति पर ही निर्भर रहते हैं, इसे क्या कहेंगे ?

सिविल सर्जन ने डा० व्यास की मृत्यु के पश्चात किरण को डा० व्यास का वसीयतनामा देते हुए कहा—आपके श्वसुर यह लिख गये हैं।' किरण फूट कर रो पड़ी और अपने मृतक श्वसुर के पैर से लिपट गई। सबको आश्चर्य हो रहा था, इतनी पढ़ी लिखी होने पर भी वह कैसे रो रही है। कितना वात्सल्य है इसमें, अपने श्वसुर को कितना चाहती है। उसके हाथ से डा० साहब का लिखा वसीयतनामा छूट जमीन पर उड़ रहा था। मृतक पिता के सिरहानें खड़े राममोहन ने उसे उड़ती आंखों से देख अपनी जेब में रख लिया।

डा० व्यास की मृत्यु से किरण को जितना आघात पहुँचा उसका आधा भी राममोहन को नहीं पहुँचा। महीने भर म ही इतनी घटनायें घटित हो जायेंगी, कौन जानता था ? अपढ़ समाज की स्त्रियाँ तो इसे केवल मात्र 'किरण का दुर्भाग्य' ही समझेंगी। किरण के माता पिता ने जब यह हृदय विदारक समाचार सुना, वह तुरंत इलाहाबाद आये और चार पाँच दिन तक किरण और राममोहन को सान्त्वना देने के बाद पुन: वापस लौट गये। इसके अतिरिक्त वह कर भी क्या सकते थे ? किरण की माँ यदि किरण के स्थान पर अन्य कोई होता तो उसे अभागिनी के अतरिक्त और कुछ न कहती किन्तु इस समय उसके लिये सब कुछ भगवान की लीला थी। पहले किरण के पिता ने किरण क सामने लखनऊ चलने का प्रस्ताव रखा किन्तु किरण उन्हें ऐसी दशा में छोड कहीं भी नहीं जा सकती थी।

बन कर बिगड़ना आसान होता है किन्तु बिगड़ कर बनना कठिन। मनुष्य में भली आदतें जितनी ही देर में पनपती है, बुरी आदतें उससे कहीं अधिक शीघ्र। बुरी आदतें मनुष्य की इच्छा शक्ति को निर्बल बना उसके चरित्र को दूषित कर देती हैं जब कि अच्छी आदतें उसे

सुदृढ़ करती है और उसके चरित्र का विकास होता है। बुरी आदतें मनुष्य में पाशविकता उत्पन्न कर विवेक का हनन करती है, इनसे शीघ्र पीछा नहीं छुड़ाया जा सकता। इन्हें छुड़ाने के लिये संकल्प की दृढ़ता के साथ साथ संलग्नता और अभ्यास की आवश्यकता होती है।

राममोहन कुछ दिन के लिये किरण के सौन्दर्य, शील और अपने पिता के आकस्मिक निधन में अपनी पुरानी आदतो को भूल सा गया था; किन्तु ज्यों ज्यो पिता की स्मृति धुंधली होती जाती थी, उसका हृदय पुनः उसे उसकी पुरानी प्रवृत्तियों की ओर ले जाने का प्रयास करता। किन्तु किरण का सौन्दर्य बीच में एक गहरी खाई बन उसे उस ओर बढ़ने से रोकता रहता।

जिन्दगी की गाड़ी बढ़ती ही गई, दो मास बीत गये, किरण राममोहन को कुछ काम धाम करने की सलाह देती। वह जानती थी, पिता की संपत्ति ही उसके पति को कुछ करने से रोकती है, उनमें आलस्य की भावना पैदा करती है। लेकिन इस प्रकार कब तक चल सकता है। पिता की संपत्ति का किसी श्रेष्ठ व्यापार आदि में सदुपयोग करना चाहिये। किन्तु राममोहन उसकी बात को बराबर टाले जा रहा था। वह भी सोचती, अभी पिता

के मृत्यु का घाव अच्छी तरह नहीं भरा है, थोड़ा और ठहर जाना चाहिये। वह दिन रात राममोहन की सेवा में लगी रहती, उसे सुखी बनाने का उपक्रम करती। वह अपने हृदय पर पत्थर रख कर भी उसे सुखी देखना चाहती थी। राममोहन भी कभी कभी उसकी सेवाओं से उन्मादी हो उठता।

एक दिन किरण को हलका सा ज्वर हो आया, उस समय उसकी आंखों में उसके श्वसुर की धूमिल स्मृति सजग हो उठी। यदि वह आज होते तो कितने चिन्तित होते। धीरे धीरे उसका ज्वर बढ़ने लगा और फिर समस्त शरीर लाल हो उठा। राममोहन को चिन्ता हुई, चेचक के दिन हैं, कहीं उसे चेचक न निकल आये। उसने किरण के सुन्दर मुखमण्डल की ओर देखा। किरण ने धीरे से कहा—'चिन्ता न करें, शीघ्र ही स्वस्थ हो जाऊँगी।'

किन्तु दूसरे दिन राममोहन ने देखा, किरण के समस्त चेहरे और शरीर पर बड़े बड़े दाने निकल आये हैं। उसने तुरन्त किरण के माता पिता को तार दे दिया और वे तार पाते ही चले आये। किरण पर भीषण रूप से चेचक का प्रहार हुआ था। उसका अंग प्रत्यंग बड़े बड़े दानो से भर गया था। माता पिता अपनी पुत्री के जीवन

से निराश हो चले और राममोहन उसके सौन्दर्य से। अब वह कैसे किसी सभा सोसायटी में उसके साथ जा सकेगा, किस प्रकार अपना मुँह दिखला सकेगा। अब किरण के साथ कैसे बीतेगी उसकी जिन्दगी ?

थोड़े दिनों के उपचार के बाद किरण अच्छी तो हो गई किन्तु अब उसमें अनेक परिवर्तन हो गये थे। जिस सुन्दर चेहरे में प्रत्येक को आकर्षित कर लेने की एक अद्भुत शक्ति थी वह अब बिलकुल से नष्ट हो चुका था अब तो केवल चेहरे पर चेचक के बड़े बड़े काले रंग के दाग मात्र ही शेष रह गये थे। कितनी कुरुप हो गई थी, रात्रि को अकेल में देखने में भय सा मालूम होता था। जब राममोहन ने किरण का यह स्वरूप देखा, काँप उठा। न तो अब उसके गालों में चुम्बन पाने की क्षमता रह गई थी और न उसकी आँखों और चेहरे में दूसरों को मोह लेने की शक्ति ही शेष रह गई थी।

मनुष्य का सौन्दर्य कितना क्षणभंगुर होता है फिर भी मनुष्य को उस पर अभिमान होता है। मनुष्य के रूप का सौन्दर्य कभी भी नष्ट हो सकता है किन्तु हृदय का सौन्दर्य कभी नहीं मिट सकता, फिर क्यों कर कोई किसी के रूप से प्यार करता है क्यों नहीं किसी के हृदय से प्यार

करता ? जब लोग जानते हैं सूरत से सीरत कहीं बड़ी है फिर भी वे क्यों सौन्दर्य पर लुटते हैं। जिन्हें अपने रूप पर गरूर होता है जो अपनी खूब सूरती पर इतराते हैं उनसा बड़ा कोई मूर्ख नहीं। प्रेम दिल की खूबसूरती से किया जाता है न कि रूप की, पर इसे कौन मानता है ?

किरण का रूप देख सभी को दुख हुआ किन्तु इसमें कोई कर ही क्या सकता था। लडकी की जिन्दगी बच गई यही माता के लिए कौन कम खुशी की बात थी। लेकिन राममोहन का सर्वस्व उजड़ गया था, इससे अच्छा होता यदि किरण मर जाती। उसने किरण से नहीं किरण के सौन्दर्य से विवाह किया था।

जब किरण ने दर्पण में अपना प्रतिबिम्ब देखा, वह स्वयम काँप उठी। उसका इतना विकराल रूप ? वह अपने आप से भयभीत हो जमीन पर गिर पड़ी।

किरण के पिता को अधिक दिन की छुट्टी नहीं मिल सकी थी अतएव उन्होंने और उनकी पत्नी ने निश्चय किया लखनऊ वापस जाना चाहिये। इस बार उन्होंने किरण पर बहुत दबाव डाला कि कुछ दिन के लिए वह लखनऊ चली चले किन्तु किरण ने जाने से साफ इन्कार कर दिया। वह नहीं चाहती थी कि कोई भी उसका मुख

देख सके, व ह बस अपने पति की सेवा में वहीं अपना शेष जीवन काट देना चाहती थी। माता पिता के अनेक अनुनय विनय पर भी किरण ने अपना हठ नहीं छोड़ा। अन्त में मजबूर हो उन्हें अकेले ही जाना पड़ा।

धीरे धीरे राममोहन को किरण से घृणा सी होने लगी थी और किरण उसे एक जजाल सी प्रतीत होने लगी और दिन रात राममोहन को खुश रखने का प्रयास करती किन्तु फिर भी दिन पर दिन वह राममोहन की आँखों में खटकती ही जा रही थी। किरण का सौन्दर्य जो अब तो राममोहन के आगे एक खाई बन कर उसे अपनी पुरानी आदतों की ओर बढ़ने से रोका करता था अब पूर्ण रूप से नष्ट हो चुका था और राममोहन अब धीरे धीरे पुनः अपनी पुरानी आदतों से जा लगा। इस बार वह शराब और जूए के व्यसन से भी अछूता न बच सका। पिता की दौलत शराब और जुए में फुँकने लगी और वह तेजी से पतन की ओर अग्रसर होने लगा।

किरण का तिरस्कार बढ़ गया। वह राममोहन के लिये पागल रहती किन्तु राममोहन के लिये किरण मर चुकी थी। अब वह पूर्ण रूप से स्वच्छन्द था, उसे कोई भी नहीं रोक सकता था।

एक दिन किरण क्षुब्ध हो बोली—'तुम इस प्रकार इस सम्पत्ति को नहीं फूंक सकते, तुम्हारा इस पर कोई अधिकार नहीं है।'

राममोहन ने किरण के नाम लिखे गये वसीयतनामे के टुकड़े कर डाला और किरण को ऐसा धक्का दिया कि वह औंधे मुँह धरती पर गिर पड़ी, नाक से रक्तपात होने लगा।

किरण और उसके माता पिता ने जिसे सोना समझा था वह खोटा निकला। उसका हृदय अपने पति के प्रति घृणा से विक्षुब्ध हो उठा। कितने स्वार्थी हैं वह, मुझसे नहीं मेरे सौन्दर्य से प्रेम था उन्हें। क्या सभी पुरुष नारी के सौन्दर्य से प्रेम करते हैं? किन्तु पत्नी तो अपने कुरूप से कुरूप पति को भी प्यार करती है, फिर पुरुष क्यों नहीं ऐसा करता? फिर उसके साथ तो दैवी अत्याचार हुआ है, उसमें वह कर भी क्या सकती थी? पुरुष के आगे नारी की कितनी कीमत है इसका ज्ञान उसे आज ही हो सका था।

वह आत्म ग्लानि और क्षोभ से पागल हो उठी, उसके हृदय में विद्रोह की ज्वाला भभक उठी। उसने आँचल के छोर से नाक का रक्त पोंछते हुए देखा उसमें कत्थे से खून के अमिट दाग पड़ गये थे, जिन्हें वह कभी नहीं भूल सकती।

दस

उस रात्रि वास्तव में सेठ की हत्या मिस मोहना और उनके साथी ही कर गये थे। वे लखनऊ से ही सेठ के पीछे लग गये थे, उन्हें मालूम था कि इसके पास रुपये हैं और इसीलिये अनेक प्रकार की झूठी बातों से वह उसकी टोह ले रहे थे। समय पाते ही वह सेठ के पाँच हजार रुपये लेकर कहीं बीच में उतर गये थे। सेठ जी के जाग जाने से उन्हें कहीं असफलता अथवा किसी बड़ी विपत्ति का सामना न करना पड़े इस भय से वे उसके गले को एक मजबूत कपड़े से कस कर बाँध गये जिससे वह वहीं घुट घुट कर मर जाये और चिल्ला भी न सके। जिस समय यह घटना घटित हुई हिमालय निश्चल सो रहा था, संभव है जागने पर उसे भी जान से हाथ धोना पड़ता किन्तु वे उसे शान्त देख वैसा ही छोड़ गये। शायद इसमें उन्होंने अपनी रक्षा का भी उपाय समझा।

हिमालय निर्दोष था, उसने पुलिस के सन्मुख सारी

घटना का सही सही रूप बता दिया। पुलिस भी जानती थी कि वह सर्वथा निर्दोष है किन्तु फिर भी कानून का पालन तो करना ही होगा। यद्यपि वह जो कुछ कह रहा है ठीक है फिर भी पूछ ताछ होते तक उसे पुलिस की देख रेख में रखना ही होगा।

हिमालय को मानव के प्रति घृणा हो चली। वह सोच रहा था, यह संसार भी कितना सीमित है। कोई भी काम धन के परे नहीं, प्रत्येक व्यक्ति हर काम धन के लिये करता है। हत्या, लूट, नौकरी बेइमानी, परिश्रम, व्यापार ये सभी धन के लिये होते हैं। कितना स्वार्थमय जीवन है। हमसे अच्छे तो वे पशु है जो अपने स्वार्थ की सीमा का इतना अधिक उलंघन तो नहीं कर जाते। कौन जानता था सभ्यता की आड़ में ये स्त्री और पुरुष सेठ की हत्या कर उसके धन का अपहरण करना चाहते थे। वे किस प्रकार टोह ले रहे थे, कितने विचित्र ढंग से उन्होंने सब को प्रभावित कर डाला था। क्या कोई भी उनकी बात से विश्वास कर सकता था कि ये सभ्यता के रूप में लुटेरे छिपे हैं? कितना विचित्र है संसार! विद्या, कलाकार, कवि, लेखक, सभी धन के हाथों बिक चुके हैं, हर तरफ स्वार्थ की दीवार खड़ी है।

कोर्ट ने निश्चय किया जब तक वास्तविकता का पता नहीं लग जाता, न्यायालय अपने न्याय के निष्कर्ष पर नहीं पहुँचता उसे पुलिस की देख रेख में एक विशेष कमरे में रहना होगा। उसका सामान पुलिस ने अधिकार में कर लिया और उसे एक कोठरी में बन्द कर दिया। उस पिंजड़े में एक ऐसे पक्षी को कैद कर दिया गया जो हमेशा प्रकृति और कल्पना के संसार में विचारों के पंख लगा विचरण करता था। उस अधकार और सीलन से भरी कोठरी में रह रह कर उसके आगे उसके भाग्य के रेखा-चित्र बनते बिगड़ते रहते। किरण की धूमिल स्मृति भी सजग हो उठती। वह कैसी होगी, कहाँ होगी? अब तो उसका विवाह भी हो चुका होगा। अब तो वह बहुत सुखी और सन्तुष्ट जीवन बिता रही होगी, कितने ही परिवर्तन हो गये होंगे उसमें। क्या अब भी उसे मेरी याद आती होगी? नहीं अब तो वह हमें भूल चुकी होगी, उसे क्या मालूम होगा कि उसका हिमालय इस अवस्था में है। दो तीन मास में ही दुनिया कितनी बदल गई होंगी। वह अंतिम बार उससे मिल भी न सका, जाने अब मुलाकात हो न हो? जो भी हो संसार चाहे उसके विषय में कितनी ही गलत धारणायें क्यों न अख्तियार

किया हो, किरण कभी भी उसके गलत विचार न लाती होगी। जहाँ भी हो सुखी हो, भगवान उसका सुहाग और सुख अचल रखे बस यही उसकी कामना है।

आज हिमालय का फैसला होगा, और दिनों के समान आज भी दो पुलिस वाले उसके पिंजड़े का दरवाजा खोल उसे बन्द मोटर में बिठा न्यायालय की ओर ले चले। आज न्यायालय में बहुत भीड़ थी। हिमालय को मोटर से निकाल कठघरे में खड़ा किया गया। वकीलों की बहस समाप्त हुई और जज ने अपना निर्णय सुनाया, सबके कान खड़े हो गये थे और आँखें जज की ओर लगी थी।

जज ने निर्णय देने के पूर्व एक बार करुणा भरी दृष्टि से हिमालय की ओर देखा, दाढ़ी से भरा हुआ पीला चेहरा, काँटे के समान सूख कर आधा शरीर, अन्दर को धँसी हुई आँखें, उसके निर्दोष होने के सर्वथा प्रमाण थे। जज ने गौरव से भरी आँखों को दर्शकों और वकीलों की ओर करते हुए कहा—'न्यायालय को इस बात का पूरा पूरा सबूत मिल गया है कि उस दिन सेठ की हत्या मुल्जिम हिमालय ने नहीं बल्कि उसी गिरोह ने किया है जिसका वर्णन मुल्जिम ने अपने बयान में किया था। इस

गिरोह का काम है, दूसरों को फँसा लूट मार और अशान्ति उत्पन्न करना। वास्तव में मिस मोहना फिल्म-स्टार जिसके नाम से उस दिन यह षड़यंत्र रचा गया था वह कोई अन्य मिस मोहना थीं। वास्तविक मिस मोहना तो उस दिन एक नहीं दो दो चित्रों की शूटिंग में बम्बई में व्यस्त थीं। यह कोई ऐसी स्त्री थी जो दूसरी दूसरी अभिनेत्रियों के नाम बता लोगों को ठगा करती है, पुलिस तत्परता पूर्वक उक्त गिरोह का पता लगा रही है। हर पहलू पर विचार करके न्यायालय यही निर्धारित करता है कि मुल्जिम हिमालय सर्वथा निर्दोश है और उसे आज से मुक्त किया जाता है'

समस्त कोर्ट हर्ष ध्वनि से गूंज उठा, सिपाही एक किनारे हट गये, हिमालय धीरे धीरे कठघरे से नीचे उतर रहा था।

कोर्ट से बाहर निकल कर हिमालय ने अनुभव किया, उसमें अनेक परिवर्तन हो गये हैं, संसार बहुत कुछ बदल गया है, उसके चारों ओर अंधकार ही अंधकार है।

सहसा किसी ने उसके कंधे पर हाथ रखते हुए कहा—

'घबड़ायें नहीं, हम आपको सहारा देंगे'

हिमालय ने घूम कर देखा, उसके निकट एक श्वेत खद्दरधारी अधेड़ उम्र के, श्यामल वर्णीय व्यक्ति खड़े मुस्करा रहे हैं। उनकी टोपी सूर्य की रोशनी में झलमल झलमल हो रही थी। वह उन्हें एक टक देखता रहा और फिर उसने आँखें नीची कर ली। उन्होने पुनः कहा—'आप किसी बात की चिन्ता न करें, हम आपकी सहायता करगे। हिन्दी के सीधे साधे कवि भी ऐसे मामलों में फँस जायेंगे, मुझे विश्वास न था। कोई बात नहीं, आइये मेरे साथ चलें।'—कह वह ताँगे वाले को आवाज देने लगे।

ताँगा आ गया, हिमालय बिना कुछ कहे सुने ताँगे पर जाकर बैठ गया, तब तक एक सिपाही ने उसके निकट आते हुए कहा 'आपका सामान जेलर के पास जमा है, उसे भी आप लेते जायें तो अच्छा होगा।'

'हाँ चलिये, उसे भी ले लिया जाय।'—कह वे सज्जन ताँगे पर बैठ गये और ताँगे वाले से जेल की तरफ चलने को कहा। ताँगे वाला पहले तो हिमालय की ओर ध्यान पूर्वक देखता रहा परन्तु शीघ्र ही उसने घोड़े को जेल की सड़क पर मोड़ दिया।

जेल पहुँच कर हिमालय ने अपना सामान लिया,

उसके बचे हुए रुपये भी वापस मिल गये और उसके बाद ताँगा तेजी के साथ इटारसी की पक्की सड़कों पर भागने लगा।

'यहाँ से मेरा एक हिन्दी दैनिक निकलता है, उसी के साप्ताहिक संस्करण का कार्य भार आपको सम्हालना होगा। प्रारंभ में तो डेढ़ सौ रुपये मासिक ही दे सकूगा किन्तु बाद में आपका वेतन और बढ़ जायेगा। वैसे तो आप बहुत ही सुलझे हुए और प्रतिभाशाली युवक मालूम होते है किन्तु संसार में ठोकरें भी बहुत खाई है आपने। मैंने भी इस संसार का बहुत कटु अनुभव किया है तभी तो आदमी देख कर पहचान जाने की भी क्षमता रखता हूँ।'—कह वह खिलखिल कर हँस पड़े। हिमालय ज्यो का त्यों मौन ही बैठा रहा। इसी बीच ताँगे वाले ने कहा—'प्रवाह प्रेस न बाबूजी ?'

'हाँ भाई और कहाँ ले जावोगे !'

'नहीं बाबूजी, यों ही पूछा था ?'—और थोड़ी ही देर में एक बड़े से मकान के सामने आकर ताँगा रुक गया। हिमालय ने देखा सामने बड़े से साइनबोर्ड में लिखा था—'प्रवाह कार्यालय।'

'सामान ऊपर भिजवा दो और पैसे कैशियर से ले

लो।'—कह वह सज्जन ताँगे से उतर मकान की ओर बढ़ने लगे, हिमालय भी उनके पीछे पीछे हो लिया। उसे ठिठकते देख उन्होंने कहा—'आइये, अन्दर चलिये, ठिठक क्यों गये ?'

ऊपर की मंजिल पर पहुँच कर उन्होंने एक खाली कमरे को खोलते हुए कहा—'यही है आपका कमरा, अभी सब चीजों का प्रबन्ध किये देता हूँ तब तक आप यही ठहरें।'—और उसके बाद वह कहीं चले गये। इसी बीच ताँगे वाले ने उसी कमरे में लाकर सामान रख दिया और इच्छा न होते हुए भी एक छोटा सा सलाम कर चलता बना।

रामेश्वर जी बड़े ही नेक स्वभाव के थे। बहुत ही हँस मुख और मिलनसार व्यक्ति थे। दस वर्षों से लगातार इटारसी में रह रहे थे अतएव पर्याप्त यश और प्रभाव था। एकमात्र हिन्दी दैनिक का संपादक और संचालक दोनों ही होने से उनकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। इस बीच हिमालय के केस से उन्हें विशेष रुचि हो गई थी और उन्होंने उसे पूरी सहायता देने का निश्चय कर लिया था। रामेश्वर जी के कोई भी न था यहाँ तक कि वे अभी तक अविवाहित ही थे। सच पूछिये तो उन्होंने सांसारिक

जंजाल में न फँसने का ही दृढ़ निश्चय कर लिया था। जो कुछ भी कमाते खाने-पीने, दान-दक्षिणा और दूसरों की सहायता तथा खिलाने में व्यय कर देते। इस प्रकार बहुत ही सुखद तथा सन्तुष्ट एकाकी जीवन चल रहा था, कार्यालय का प्रत्येक कर्मचारी उनसे बहुत खुश था इसीलिये कहीं अन्यत्र अधिक वेतन पर भी वह उन्हें छोड़ कर नहीं जाना चाहते थे।

हिमालय रामेश्वर जी के साथ रह कर शीघ्र ही दैनिक पत्रके संपादक का भी कार्य सीख गया। पत्र के काम में वह दत्त हो गया था, रामेश्वर जी भी उसकी सफलता पर मन्त्र मुग्ध से होने लगे। धीरे धीरे दैनिक पत्र का भी कार्य भार हिमालय के कंधों पर आ पड़ा और अब संपादकीय भी वही लिखने लगा। उसके संपादकीय का चारों ओर समुचित आदर होने लगा, सभी उसके अग्रलेख बड़े चाव के साथ पढ़ते। पत्र के नये ग्राहक बढ़ने लगे और उसके लेखनी की धूम सी मच गई। रामेश्वर जी उसके काम से प्रसन्न हो उसका वेतन ढाई सौ रुपये कर चुके थे। उसे हर प्रकार की सुविधा थी अतएव वह भी उन्हें बहुत मानता था। दो तीन मास के ही अल्प समय में वह जो कुछ भी इतना बढ़ गया था उसका सारा

श्रेय रामेश्वर जी का ही था।

हिमालय उनके साथ रह कर हँसना, प्रसन्न रहना भी सीख गया था। काम की व्यस्तता और रामेवर जी की संगति में वह अपने पुराने घावों को भूलने सा लगा। कभी कभी किरण की स्मृति उसे विकल बना देती किन्तु शीघ्र ही वह अपने को सम्हाल लेता और उसे भूलने का प्रयास करता। एक आध बार किरण को पत्र लिखने की भी इच्छा हुई किन्तु उसने उसे दबा दिया, वह नहीं चाहता था कि उसके मन की दबी हुई व्यथा फिर से जाग उठे।

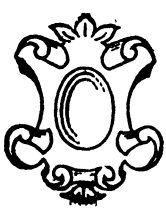

ग्यारह

बीते हुए क्षणों की स्मृतियां, करुण-कहानियों-सी, अपना स्थायी प्रतिबिम्ब मस्तिष्क पटल पर अंकित कर, हृदय को अनमनस्कता और हक की प्रबल धारा में प्रवाहित कर काले मेघों से आच्छादित आकाश में बिजली की चमक बन शीघ्र ही अदृश्य हो जाती हैं।

किरण की ठेस दिनों दिन बढ़ती जा रही थी, राममोहन उन्मत्त निर्झर के समान किरण का साथ छोड़ पतन के मार्ग की ओर भागा जा रहा था। अन्यान्य स्त्रियों के साथ घूमना, दिन में आठ आठ डिब्बे सिग्रेट पीना, संध्या को अँग्रेजी होटलों में व्हिस्की का पान करना, बाल-डान्स में भाग लेना, रात रात भर गायब रहना ये सब उसकी पीड़ा को बढ़ा रहे थे। धीरे धीरे राममोहन ने किरण का इसी प्रकार परित्याग कर दिया ज्यों मुर्झाई कली को तेज खुर्पी से माली अलग कर देता हो। संभवत: किरण उसके इन आघातो को भी सहन कर लेती

किन्तु वह उसका जूए में पड़ अपनी समस्त सम्पत्ति नष्ट करना कदापि नहीं देख सकती थी। उसे अच्छी तरह मालूम था जो भी इस लत में एक बार पड़ जाता है वह फिर आसानी से इसमे नहीं बच सकता। जिस घर में इसका प्रवेश हो जाता है उस घर की एक एक ईंट बिक कर रहती है।

जिन्दगी की पिछली बातें बिजली की चमक बन कर आती और चली जाती। वह सोचती जब पढ़े लिखे समाज का होने पर भी उसे बुरी तरह से कुचला जा रहा है, तब एक अपढ समाज के नारी की क्या दशा होगी? उसके हृदय में विद्रोह की भावना बढ़ती ही गयी, वह उसे लाख प्रयत्न करने पर भी न दबा सकी। किरण पढ़ी लिखी थी, बी० ए० तक शिक्षा पाई थी, वह भली भाँति अपना पेट भर सकती थी। उसे अपना अपमान असह्य हो उठा। सहन शक्ति की भी एक सीमा होती है, स्वाभिमान की ठेस कमजोर से कमजोर को शक्ति प्रदान करती है। उसने निश्चय कर लिया, 'आज वह अपने पति से अपने भाग्य का निपटारा करके ही रहेगी।' उसे ध्यान हो आया—काश इस समय हिमालय होता।

लेकिन उसने तुरंत ही अपने को सम्हाल लिया और

क्रुद्ध सिंहनी की भाँति राममोहन की प्रतीक्षा करने लगी।

जिस समय रात्रि को एक बजे राममोहन ने अपने कमरे में प्रवेश किया, उसने देखा कमरे की बत्ती जल रही है और चेचक के गहरे दागों से भरी कुरूप, भयावनी किरण उसके सामने रास्ता रोके खड़ी है। राममोहन ने मुँह में सुलगती हुई सिग्रेट को फेंकते हुए कहा—

'रास्ता छोड़ो।'

'आज आप इस तरह नहीं जा सकते।'

'मतलब मैं समझा नहीं।'

'आगे बढ़ने से पहले मेरे भाग्य का निर्णय करना होगा।'

'मैं कहता हूँ रास्ता छोड़ो।'—कह राममोहन किरण का हाथ पकड़ उसे एक किनारे हटा अपने कपड़े बदलने लगा।

'क्या इसी दिन के लिए आप मुझे व्याह कर लाये थे?'

राममोहन ने कोई भी उत्तर न दिया। किरण ने पुनः कहा—

'आपका अकेले ही इस घर पर कोई अधिकार नहीं

है, इस पर मेरा भी हक है, यह मेरा भी घर है।'

राममोहन ने उसे ध्यान पूर्वक अग्नेय नेत्रों से देखा और पुनः अपने कार्य में व्यस्त हो गया।

'अब और अधिक मैं यह सब कुछ नहीं सहन कर सकती। मै नहीं चाहती आप मुझसे जबरदस्ती प्यार करें, मैं नहीं कहती मुझे अपने हृदय की रानी बना कर रखें किन्तु इस प्रकार आपका दुर्व्यसनों में लिप्त रहना मै नहीं देख सकती।'

'तुम्हें हमारे बीच में बोलने का कोई हक नहीं है।' —राममोहन ने बिगड़ कर कहा।

'हक कैसे होगा ? अब मेरे पास रूप जो नहीं है, उसे भगवान ने छीन जो लिया है।'—किरण ने रूखी हँसी हँसते हुए कहा।

'मैं कहता हूँ, चुप हो जाओ।'

'अब और अधिक चुप नही रह सकती। मेरी आत्मा को अब और अधिक कुचल कर नहीं रखा जा सकता। मैं आपकी पत्नी हूँ, आप मुझे अग्नि को साक्षी देकर लाये हैं इसे मत भूलिये।'

'तुम हमारी कोई भी नहीं हो, मैं तुम्हें नहीं चाहता, तुम्हें हमारे बीच में बोलने का कोई भी हक नहीं है। जो

मेरा जी चाहेगा करूँगा, मुझे कोई नहीं रोक सकता।'

'लेकिन आप सम्पत्ति को इस प्रकार बर्बाद नहीं कर सकते हैं।'

'तुमसे मतलब ?'

'बाबूजी सम्पत्ति मेरे नाम लिख गये है, उस पर मेरा अधिकार है।'

अब राममोहन अधिक न सह सका, इस बात ने उसके हृदय में तेज बर्छी सा प्रहार किया। वह तड़प कर बोला—

'अब इससे अधिक बढ़ी तो तुम्हारा मुँह कुचल कर रख दूँगा।'

'अब कुचलने को शेष रह ही क्या गया है, सब कुछ तो कुचल चुके है। अब भी जी न भरा हो तो कुचल डालिये इन हड्डी पसली को, देखिये कोई भी साध बाकी न रह जाये।' राम मोहन किरण की यह ढिठाई न सह सका, उसे धक्का देकर कमरे से बाहर निकाल दिया और अपने कमरे का दरवाजा बन्द कर खाट पर जा गिरा—'राक्षसी, बदसूरत कहीं की, मर भी नहीं जाती।'

किरण मर्माहत हो गिर पड़ी, वह उठी और अपने पति को अधिक छेड़ना उचित न समझ खामोश हो गई। वह जान गई अब वह उसे किसी भी प्रकार नहीं अपना सकते, उनके आगे कोई भी चट्टान रोडा बन कर नहीं आ सकती, उनके पास हृदय नहीं पत्थर है जो कभी भी नहीं पसीज सकता।

किरण ने निश्चय कर लिया, अब वह वहाँ एक क्षण भी नही रह सकती, उसके शेष जीवन का भार अब उसी पर है, उनसे लड़कर नहीं जीता जा सकता। उसे चारों ओर अंधकार ही अंधकार दिखाई पड़ने लगा, माता पिता का घर आकाश दीप के समान मालूम भी पड़ता मगर वह वहाँ भार बनकर नहीं रहना चाहती थी। उसने सोचा उसे हिमालय के पास चली जाना चाहिए किन्तु यह भी ठीक न लगा। हिमालय जेल में हो, कहाँ हो, कुछ निश्चित नहीं फिर वह इस प्रकार अपमानित हो उसके सामने जाना भी तो नहीं चाहती थी। वह नहीं चाहती थी कि उसके लिये भी वह भार बन जाये। उसके आगे आत्मघात का दृश्य नाच उठा, किन्तु वह इतनी भीरु नहीं थी कि जीवन के संघर्षों से घबड़ा आत्मघात कर लेती। लेकिन फिर भी समाज के लिये संसार के लिये,

उसे मरना ही था चाहे वह स्वयम् न मरे। उसने निश्चय कर लिया यदि जिन्दगी की नाव कहीं और खे ले चलनी है तो सामाजिक किरण को मरना ही होगा।

उसने उसी रात्रि एक पत्र अपने स्वामी को लिखा:—

'मैं आपकी आँखों का काँटा बन कर नहीं रहना चाहती, मैं नही चाहती कि मेरे कारण आपको किसी भी प्रकार का कष्ट हो, समाज में हास्यास्पद बनना हो। संभवत: आपको मेरी लाश से भी घृणा होती अतएव मैं सब कुछ छोड़ यहाँ से बहुत दूर जा रही हूँ जहाँ से कोई भी मुझे वापस नहीं ला सकता। मैं स्वेच्छा से मरी ही हूँ, मेरी मृत्यु का कारण कुछ भी नही है। मेरी लाश को ढूढ़ने का असफल प्रयास न किया जाय।

आपकी हतभागिनी

—किरण—

पत्र लिखने के बाद उसने उसे अपने बिस्तर पर रख दिया और साथ में कुछ आवश्यक कपड़े और रुपये ले उस अंधेरी रात में ही निकल पड़ी। जिस समय वह स्टेशन पहुँची, घड़ी में चार बज चुके थे। कलकत्ते जाने वाली गाड़ी बिलकुल तैयार खड़ी थी। वह दूसरे

दर्जे का टिकट ले एक जनाने डिब्बे में बैठ गई, उसका समस्त शरीर भय से काँप रहा था। रात भर की थकान के कारण उसे शीघ्र ही नींद आ गई और वह खिड़की पर सर टेक सो गई। उसकी आँख के कोर में जल भरा था।

बगल में बैठी स्त्री ने देखा, वह बडी दुखी मालूम होती है, माथे पर पड़ी सिन्दूर की लालिमा धुँधली पड़ी हुई है। उसका जी भर आया और वह अपने बगल की स्त्री से बोली—'थोड़ा सरक जावो पूर्णिमा।' वह अठारह उन्नीस वर्ष की कन्या थोड़ा सा सरक गई और वह स्त्री भी उससे सट कर बैठ गई। इस प्रकार थोड़ी सी जगह और बन गई। स्त्री ने अपन पीछे लगी तकिया को निकाल बीच में बनी हुई जगह में रख किरण का सर उस पर टिका दिया। किरण थकान के कारण शीघ्र ही आराम से उस तकिये का सहारा पा सो गई।

उस स्त्री ने अपनी लड़की से कहा—'बड़ी दुखी मालूम होती है। पति जिन्दा हैं।'

'थकी होगी।'

'साथ में पति या और कोई होगा ही।'

'लेकिन छोड़ने तो कोई नहीं आया था।'

'मालूम नहीं, जगने पर सब पता लगेगा अभी सोने दो विचारी को'—कह उसने स्वयम् खिड़की पर सर टेक आँखें मूंद ली।

जिस समय किरण की आँखें खुली, उसने देखा काफी दिन चढ़ आया था, डिब्बे में स्थान से अधिक यात्री भर आये थे। अपने सिर के नीचे तकिया लगा देख उसे विस्मय सा हुआ, तभी उस स्त्री ने हँसकर कहा—'मैंने लगा दिया था, सोचा बहुत थकी होगी।'

किरण उसे कृतज्ञता पूर्ण नेत्रों से देख कर भी धन्यवाद न दे सकी। उस स्त्री ने पुनः प्रश्न किया—'कहाँ जा रही हो, कलकत्ते ?'

'जी।'—उसने उस अधेड़ स्त्री के गौर वर्ण चेहरे को ध्यान पूर्वक देखते हुए कहा।

'मालूम होता है अभी हाल ही में देवी निकली थीं ?'

किरण उत्तर स्वरूप। एक लम्बी साँस मात्र ही ले सकी।

'बड़ी दुखी मालूम होती हो, साथ में और कोई है ?'

'जी नहीं।'

'कोई भी नहीं।'

'नहीं।'

'काम की खोज में जा रही हो, पति तो अभी जिन्दा हैं?'

किरण उसकी इस बात का क्या उत्तर देती, उसने सिर नीचा कर लिया। पूर्णिमा जो अब तक अपनी माँ और किरण की बातें सुन रही थी, किरण को ध्यानपूर्वक देखने लगी।

'यह आपकी लड़की है?'—किरण ने अनुमानतः प्रश्न किया।

'हाँ यह हमारी बेटी है।'

'और भी हैं?'

'नहीं बस यही एक है, चाहे इसे बेटा समझ लो, चाहे बेटी।'

धीरे धीरे किरण और उस परिवार के बीच परिचय बढ़ता ही गया और वे एक दूसरे से बहुत घनिष्ठ हो चले। पूर्णिमा और उसकी माँ कलकत्ते में ही रहती थीं, वे जाति की बंगाली ब्राह्मण थीं। बस उन दो माँ बेटी के अतिरिक्त उस परिवार में और कोई भी न था। माँ एक लड़कियों के स्कूल में प्रधान अध्यापिका थी और लड़की उसी स्कूल

में पढ़ती थी। दोनों का जीवन बहुत ही सुचारु रूप से चल रहा था, इस समय वे दिल्ली से आ रही थी। पूर्णिमा की स्वाधीन दिल्ली को देखने की बडी साध थी अतएव उसकी माँ छुट्टियों में उसे दिल्ली घुमाने ले गई थी और अब वे कलकत्ते वापस लौट रह थ। बगाली ब्राह्मण होने पर भी उन्हें हिन्दी का अच्छा ज्ञान था और वह बहुत अच्छी तरह हिन्दी बोल लिख सकती थीं। पूर्णिमा के पिता कलकत्ते के एक कालेज में हिन्दी के प्रोफेसर भी थे परन्तु तीन वर्ष हुए बिचारे हृदय की गति के रुक जाने से चल बसे थे।

धीरे धीरे किरण उनसे बहुत ही घुल मिल गई। उसने उनसे अपने विवाह, सौन्दर्य, दैवी प्रकोप से लेकर अब तक की सारी कहानी कह सुनाई। जब पूर्णिमा ने किरण की कहानी सुनी तब उसका हृदय पुरुषों के प्रति घृणा से भर गया। उसने कहा—'छि: ये आदमी भी कितने निर्मोही होते हैं।'

'किन्तु सभी ऐसे नहीं होते,'—कहते कहते उसकी माँ की आँखें छलक आईं। उन्होंने आँचल के छोर में उसे रोक लिया। उसे स्मृति हो आई उन घड़ियों की जब पति ने उसके कुरूप होने पर भी उससे विवाह करना

स्वीकार कर लिया था, उसके बीमारी में उसे एक पल के लिये नही छोड़ सकते थे।

उसने अपने को सम्हालते हुए कहा—'तो कहाँ भटकोगी इतनी बड़ी नगरी में, जहाँ अपना पराया कोई भी न हो ?'

'कहीं कोई काम धन्धा ढूढ़ूगी। बी० ए० तक पढ़ी हूँ कुछ न कुछ अवलंब तो मिल ही जायगा।'

'इस प्रकार भटकने से कहाँ काम मिलेगा, मेरे साथ चलो तुम्हें अपने ही स्कूल में अध्यापिका की जगह दिला दूँगी। रहना भी मेरे साथ, अच्छा है हम भी दो से तीन हो जायेंगे और पूर्णिमा को भी अब एकाकी नहीं मालूम होगा।

कृतज्ञता के भार से किरण की आँखें नीची हो गईं। गाड़ी तेजी के साथ भागी जा रही थी। उसे ऐसा लगा जैसे वह अपने पिछले जीवन का सब कुछ पीछे छोड़ आई हो।

बारह

किरण ने आत्महत्या कर ली—यह समाचार राम-मोहन ने लखनऊ भी भेज दिया। जब लखनऊ वालों ने यह समाचार सुना, सर पीट कर रह गये, सारे घर में कुहराम मच गया। आखिर उसने आत्महत्या क्यों कर ली? अनेक कौतूहल के प्रश्न उठते और मिटते। फिर भी लोगों ने अनुमान लगाया कि अपनी बीमारी से ही ऊब कर उसने ऐसा किया है। किरण की लाश का भी कोई पता न था। लोगों ने जान लिया, वह गंगा जमुना में कूद मरी होगी।

राममोहन ने जब किरण का पत्र पढ़ा, उसमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ बल्कि वह शायद यह सोच कर कि 'चलो अच्छा ही हुआ,' एक लम्बी साँस मात्र ले सका। एक दो दिन बाद वह किरण को पूरी तरह से भूलने लगा और अब उसका जीवन एक स्वच्छन्द पक्षी की भाँति हो गया।

एक दिन जिस समय वह काफ़ी हाउस में बैठा था किसी ने धीरे से कहा—

'मैं यहाँ बैठ जाऊँ तो आपको इतराज तो न होगा ?'

वह चौंक सा पड़ा, उसने देखा काफ़ी हाउस की सभी सीटें भर गई थीं केवल उसी के सीट पर स्थान शेष रह गया था। उसके मुँह से निकल पड़ा—'बैठिये, इसमें पूछने की क्या बात थी ?'

'फिर भी पूछ लेना अच्छा ही था, संभव है आपको डिस्टर्बेन्स होता—' कह वह युवती सामने की सीट पर बैठ गई।

'एक काफ़ी और आमलेट'—उसने ब्वाय से कहा. परन्तु पुनः राममोहन की ओर मुड़ कर बोली—

'आप भी कुछ लेंगे ?'

'जी नहीं, मैंने बहुत खा लिया है।'

'फिर भी साथ तो देना ही होगा; ब्वाय दो काफ़ी औ दो आमलेट लाना।'—उसने बैरे से मुड़ कर कहा।

'बहुत अच्छा।'—कह बैरा चला गया।

'आप यहाँ क्या करते हैं ?'

'जी फिलहाल तो एम० ए० तक पढ़कर पढ़ना छोड़ दिया है। 'आप ?'

'मैं, मेरे भाई ने यहाँ एक विजनेस स्टार्ट किया है, हम पंजाब से भागकर आये है, बस यही रिफ़्यूजी समझ लीजिये।'

और फिर इस प्रकार धीरे धीरे सुधा और राममोहन में परिचय बढ़ता ही गया और वे दोनों हमेशा एक दूसरे के साथ देखे जाते। सुधा बहुत सुन्दर थी. उसने राममोहन से बताया कि उसके एक भाई के अतिरिक्त कोई भी नही है और वह भी दिन रात रुपये कमाने की धुन में लगे रहते है। स्टेशन से चौक की तरफ जाने वाली सड़क पर एक छोटा सा किरायेदार का बँगला था उसी में सुधा अपने भाई के साथ रहती थी।

राममोहन को सुधा बड़ी प्रिय लगती, धीरे धीरे दोनों में बहुत घनिष्ट सम्बन्ध हो गया और किरण के आत्मघात के दो महीने पश्चात् ही राममोहन ने सुधा से विवाह का प्रस्ताव रख दिया।

'सुधा मै चाहता हूँ, हम तुम एक दूसरे के बहुत निकट पहुँच जायें, इसलिए हमें विवाह कर लेना चाहिए।'

'यह सभव नही है।'

'क्यों ?'

'मेरे भाई शायद इस प्रस्ताव से सहमत न हों।'

'मैं उन्हें मना लूंगा।'

'उन्हें कोई नहीं मना सकता।'

'क्यों ?'

'वह किसी की नहीं सुनते, बड़े कट्टर स्वभाव के है।'

'फिर ?'

'एक तरीका है।'

'कौन सा ?'

'कल वह बम्बई जा रहे है, कोई डिस्पोजल का काम मिल गया है, लगभग दस पन्द्रह दिन में वापस आयेंगे।'

'तो इससे क्या होगा ?'

'इससे यही होगा कि उनकी अनुपस्थिति में हम तुम कहीं दूर चल के अपने अरमानों की दुनिया बसा लेंगे।'

'मुझे बिलकुल मंज़ूर है।'

'किन्तु इसके लिए हर प्रकार से मजबूत रहना पड़ेगा।'

'मतलब समझा नहीं।'

'मतलब यही कि रुपये-पैसे, हिम्मत, समाज-लोक हर ओर से मजबूत बनना पड़ेगा।'

'इसकी चिन्ता तुम न करो, यह सब मुझ पर छोड़ दो।'

'तुम्हीं को तो माँझी बनना होगा।'

'मैं सब कुछ करूँगा।'

'तो फिर ठीक है।'—युवती ने धीरे से कहा और आँखें नीची कर लीं। राममोहन प्रसन्नता से खिल उठा।

'तुम मेरे लिए कितना कष्ट उठाते हो।' —सुधा ने कहा।

'कहाँ, कुछ भी तो नहीं करता हूँ तुम्हारे लिये!'

'कितने अच्छे लगते हो मुझे!'

'और तुम क्या अच्छी नही लगती!'—कह राममोहन ने उसे अपने हृदय से लगा लिया, सुधा की बरौनियाँ उसके गालों में गुदगुदी पैदा कर रही थी।

'अब हम कितने सुखी होंगे, हमारी नई दुनिया होगी, हमारा नया जीवन होगा और तुम हमारे हृदय की रानी होगी।'—राममोहन ने उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा।

रात भर राममोहन सुधा के बारे में ही सोचता रहा। कितनी सुन्दर है वह! गुलाबी गाल, पंखुड़ियों से भी मुलायम हाथ, बड़ी बड़ी झील सी गहराई वाली आँखें,

बदन की कटान, कमर की लचक, सभी कितनी मोहक है। उसकी चाल में भी एक नई अदा और अन्दाज़ है। और किरण! वह कितनी भद्दी और बदसूरत थी, सुधा के पैर की धूल बराबर भी नहीं थी। किरण सूर्य की प्रखर किरणों से भी कहीं अधिक तेज़ थी और सुधा अमृत से भी कहीं अधिक शीतल, शान्ति प्रदान करने वाली। वह उसे पा कर धन्य हो उठेगा, वह उसके लिये अपना सर्वस्व लुटा देगा। सुधा को पा उसकी दुनिया कितनी रंगीन हो उठेगी।

सब कुछ निश्चित हो चुका था, सुधा और राममोहन ने कहीं दूर जाने की पूरी तैयारी कर ली थी। निश्चित दिन और नियत समय पर राममोहन और सुधा एक दूसरे को नियत स्थान पर मिल गये। राममोहन ने अपने साथ पाँच छः हजार रुपये भी रख लिए; सम्भव है वहां इनकी जरूरत पड़ जाये अथवा अधिक दिन तक रुकना पड़े। इतने रुपये इकट्ठे करने के लिए उसे अपनी एक कार बेचनी भी पड़ी किन्तु सुधा के लिए वह सब कुछ कर सकता था।

जिस समय राममोहन और सुधा गाड़ी के फर्स्ट क्लास के डिब्बे में बैठे, राममोहन ने महसूस किया कि आज

ज़िन्दगी में वह सबसे अधिक सुखी है।

'सुधा अब हम तुम बहुत जल्द ही एक हो जायेंगे।'

'हाँ, पर मुझे कुछ भय सा लगता है।'

'क्यों ?'

'भय्या सुनेंगे तो बड़े नाराज़ होंगे।'

'तो क्या हुआ, हम कोई पाप थोड़े ही कर रहे हैं।'

'इस प्रकार से लुक छिप कर भागना पाप नहीं तो और क्या है ?'

'प्रेम के लिए सब कुछ करना पड़ता है। लेकिन तुम क्यों इतनी भयभीत हो रही हो, अभी तो तुम्हारे लिए सब कुछ राममोहन है।'

'तुम कितने अच्छे हो।'—कह सुधा राममोहन की छाती पर ढुलक पड़ी। गाड़ी एक सीटी के साथ इलाहाबाद स्टेशन छोड़ चली। राममोहन की गोद में सुधा का शरीर पड़ा था और वह उसके घुँघराले बालों में प्यासे प्रेमी के समान अपनी अँगुलियाँ नचा रहा था। सुधा मन ही मन मुस्करा रही थी।

———

तेरह

जिस समय किरण, पूर्णिमा और उसकी माँ के साथ हावड़ा जंकशन पर उतरी, उसकी आँखें चकाचौंध हो गईं। इतना विशाल स्टेशन, लखनऊ और इलाहाबाद के स्टेशन तो इसके सामने बिलकुल नन्हें बच्चे के समान मालूम पड रहे थे। स्टेशन से बाहर निकलने पर धुआँ उगलती हुई चिमनियों की पंक्ति, गगनचुम्बी भवन, नवीन सजधज वाले प्रासाद और कार्यालय, दूर तक फैले हुए लम्बे चौड़े विशाल मार्ग और उन पर भागती हुई एक से एक सुन्दर कारों, विभिन्न सवारियों, लोगों के झुण्ड सभी ने उसे चकित कर दिया।

यदि सचमुच कहीं वह अकेली होती तो कहाँ भटकती, क्या करती, जाने कितनी ठोकरें खानी पड़तीं ? घोड़ा गाड़ी तेज़ी के साथ भागी जा रही थी, पूर्णिमा और उसकी मां मन्त्रमुग्ध सी किरण को निहार रही थीं। किरण की समझ में कुछ भी न आ रहा था, कब कौन सड़क आती और कब कौन सड़क छट जाती, वह कुछ भी

नहीं जान पाती। अकेले में यह सब देख कर कहीं वह पागल न हो जाती! सहसा गाड़ी एक सँकरी सड़क पर चलने लगी। उसे न तो गली ही कहा जा सकता है न सड़क बल्कि सँकरी सड़क कहना ही अधिक उपयुक्त होगा। उस सड़क पर भी आदमियों के झुण्ड के झुण्ड दिखलाई पड़ रहे थे। अधिकतर नीचे के हिस्से में दुकानें थीं और ऊपर के हिस्से में मकान। दोनों तरफ ही गगनचुम्बी मकान बने हुए थे।

पूर्णिमा के आदेशानुसार गाड़ी एक मकान के सामने जाकर रुक गई। पूर्णिमा की माँ ने गाड़ी वाले को पैसे दिये, गाड़ी वाला सामान उतार कर चलता बना। किरण भी उन्हीं के पीछे मकान की सीढ़ियों पर चढ़ती चली जा रही थी और उसके पीछे-पीछे एक कुली सामान लादे चला आ रहा था। ऊपर की मंजिल पर पहुँच कर उसने देखा, सीढ़ी का दरवाजा बन्द था और पूर्णिमा की माँ उसमें लगे ताले को खोल रही थीं। मकान खुल गया और वे सब अन्दर आ गये। कुली ने सामान रखा और अपने पैसे ले वापस चला गया। मकान बहुत बड़ा न था, तीन कमरे, एक छोटी सी दालाननुमा छत और गुसल-खाना था। दालान में एक नल भी लगा था जिससे पानी

का काम चलता था। इतने जरा से मकान की भी कीमत पचास रुपये थी जो औरों की दृष्टि में बहुत ही कम थी। कई लोग तो उसे सौ रुपए मासिक तक भी लेने को तैयार थे। मकान काफी सजा हुआ था, हर चीजें बड़ी ही विधिपूर्वक रखी थी। यद्यपि इस समय कई दिनों से बन्द रहने के कारण उन पर धूल की एक मोटी तह जम गई थी।

किरण उनके साथ बहुत आराम पूर्वक रहने लगी। उसने इस आश्रय को भगवान की देन समझा। दस-पंद्रह दिन में पूर्णिमा की माँ ने उसे अपने स्कूल में नब्बे रुपये मासिक पर अध्यापिका नियुक्त करा दिया और इस प्रकार उसका जीवन सुचारु रूप से चलने लगा। पूर्णिमा की माँ, किरण और पूर्णिमा तीनों साथ ही स्कूल जाती और वापस लौटती। किरण और पूर्णिमा की माँ तो वहाँ पढ़ाती थीं और पूर्णिमा वहीं दसवीं क्लास में पढ़ती थी।

किरण कलकत्ते में नई नई आई थी अतएव उसके हृदय में सदैव इस विशाल नगरी को घूमने की उत्कण्ठा बनी रहती। यों तो अक्सर पूर्णिमा और उसकी माँ भी उसके साथ घूमने जाया करती थी किन्तु फिर भी यदि

कभी वे न जा पाती तो किरण अकेली ही घूमने निकल पड़ती।

किरण अपना प्रथम वेतन ज़बरदस्ती पूर्णिमा की माँ को सौपने लगी। उसने लाख प्रयत्न किया, किरण अपना वेतन अपने लिए ही रखे किन्तु वह न मानी। किरण को जब किसी चीज़ की जरूरत भी पड़ती तो वह अपने लाये हुए रुपयों से काम निकाल लेती। वह हर काम में उनका हाथ बटाती थी, वे भी किरण को पा अत्यन्त सुखी और सन्तुष्ट थीं। किरण अपनी पिछली जिन्दगी को स्कूल की चहल-पहल, कार्य की व्यस्तता और कलकत्ता नगरी की चकाचौध करने वाली रौनक में भुलाये रहने की कोशिश करती। यदि कभी पिछले जीवन की स्मृति हो भी आती तो वह आँसू पोंछ पूर्णिमा के साथ बातों में जी बहलाने लगती।

एक दिन किरण ने पूर्णिमा से पूछा—'क्यों पूनो, क्या कोई ऐसी औषधि नहीं है जिससे मनुष्य अपना जीवन बिलकुल भूल जाये?'

पूर्णिमा ने कहा—'है, और वह है मोह तथा स्नेह का सर्वथा परित्याग।'

किरण को उत्तर कुछ सन्तोषजनक न प्रतीत हुआ और उसने कहा—

'अपना पिछला जीवन कोई नहीं भूल सकता पूनो।'

'कैसे नहीं भूल सकता ? मैं तो भूल गई हूँ, सभी भूल जाते हैं।'

'लेकिन मैं लाख प्रयत्न पर भी नहीं भूल पाती।'

'तभी तो नाहक दुखी रहती हो, बीती पर प्रकाश डालने से क्या लाभ ? खैर जाने दो इन बातों को, तुम तो हमेशा दार्शनिकों सी ही बातें सोचा करती हो। भला मैं क्या जानूं इन सब बातों को।'—और वह किरण को हँसाने का प्रयास करने लगी।

डेढ मास की अवधि बीतते कुछ भी न लगा, किरण का जीवन स्थायी रूप से चल रहा था। फिर भी कभी कभी वह सोचती, उसके माता पिता को जब उसकी मृत्यु का समाचार मिला होगा वे कितने दुखी हुए होंगे, कितनी ठेस लगी होगी उनके हृदय पर, जाने क्या दशा होगी उनकी ? उन्हें कितना पश्चात्ताप होता होगा, वे क्या सोचते होंगे मेरे विषय में, दुनिया क्या सोचती होगी उसके विषय में, श्याम बड़ा होकर क्या सोचेगा अपनी दीदी के लिए। उसने जो कुछ भी किया अच्छा नहीं किया, वह जैसी भी वहाँ थी, वहीं रहना था। इस प्रकार पति से अलग होने से लोगों ने कितनी गलत धारणायें

बना ली होंगी। उसे पति को नही छोड़ना था। किन्तु वे भी तो कितने क्रूर हो चले थे, उनके राक्षसी व्यवहार से कौन न घबड़ा उठता। वे उसे कितना अधिक सताने लगे थे।

उसके आत्मसम्मान को किस बुरी तरह से कुचल डाला था किन्तु फिर भी वह सब कुछ सहती थी। फिर वह क्यों चली आई ? उसे वही रहकर इससे भी बड़े बड़े कष्टों को सहन करना था। पढ़ी लिखी होकर भी उसने जो कुछ सहन किया है वह कुछ कम नहीं है, कम से कम पढ़े लिखे समाज की कोई भी नारी अपना इतना अधिक अपमान कभी सहन नहीं कर सकती। उसके अत्याचारों से पीड़ित होकर भी सर न उठाना उसका कर्त्तव्य कभी नहीं कहता। स्त्री पति के लिए एक साथी बन कर आती है न कि गुलाम।

जिन लोगो ने भी उसकी 'आत्महत्या' के विषय में सुना होगा क्या सोचने होंगे उसके विषय में ? कही वे यह न सोचते हों कि किरण ने हिमालय को न पाकर ही.....ऐसा किया है।

छि: वह भी कितनी पागल है। जाने क्या क्या सोचने लगती है। और हाँ, जब हिमालय उसकी आत्महत्या के

विषय में सुनेगा तब क्या सोचेगा, क्या करेगा वह ? कहीं यह न सोचे कि किरण के पति ने ही उसे मारा है और फिर वह कोई अनहोनी घटना न कर बैठे...। नहीं नहीं, अब यह सब कुछ वह और अधिक सहन नहीं कर सकती, इस प्रकार सबको धोखे में रख वह उनका अनिष्ट होता कदापि नहीं देख सकती। उसे प्रकट हो जाना चाहिए, अब और अधिक रहस्य को नहीं छिपाना चाहिए। उसे तुरन्त ही लखनऊ अथवा इलाहाबाद वापस लौट जाना चाहिए। लेकिन अब वह कैसे किसी के सामने जा सकती है ? उसके मुख पर गहरी कालिख जो पुत चुकी है। अब वह किसी की भी नहीं हो सकती, उसे कोई नहीं अपना सकता। उसे पुनः आया देख, उसके पति, माता-पिता सभी संकट में पड जायेंगे; समाज जाने क्या क्या सोचेगा उसके विषय में।

वह ज्यों की त्यों निश्चल पड़ जाती। आँखों में आँसू उमड़ पड़ते किन्तु वह उन्हें छिपा शीघ्र ही स्वस्थ बनने का प्रयास करती।

— —

चौदह

हिमालय और रामेश्वर जी के घोर परिश्रम और सहयोग से 'प्रवाह' दिनो दिन उन्नति करने लगा। 'प्रवाह' का चारो तरफ खूब स्वागत होने लगा हर जगह इसकी धूम सी मच गई। इटारसी ही नहीं, अन्य स्थानों पर भी प्रवाह के ग्राहक दूने तिगुने होने लगे। प्रवाह के कारण सभी वर्ग को सचेत हो जाना पड़ा। उसकी निष्पक्ष और सही नीति ने सभी को सावधान कर दिया। मार्क्सवाद का ढोंग रचने वाले समाजवादी तथा साम्यवादी वर्ग, देश पर शासन करने वाली कॉग्रेसी सरकार सभी को अपने गलत वक्तव्यों अथवा नीति पर प्रवाह की खरी खोटी सुननी पड़ती। 'प्रवाह' की इस नीति से जनता में प्रवाह का सम्मान बहुत बढ गया। कुछ विद्वानों ने तो यहाँ तक कह डाला कि सच्ची पत्रकार कला इसी को कहते हैं, प्रत्येक स्वाधीन राष्ट्र को ऐसे ही पत्रों की आवश्यकता है जो प्रत्येक के दोषों पर प्रकाश डाल सके।

'प्रवाह' अन्य पत्रों के समान किसी विशेष वर्ग को ही भला बुरा नहीं कहता था बल्कि उसका ध्येय सभी वर्ग के लोगों की गलतियों पर प्रकाश डालना था। वह केवल उनकी गलतियाँ ही बताना नहीं जानता था बल्कि उनका सही मार्ग भी बताना जानता था। अपने देश में पत्रकार कला वास्तव में बहुत नीचे गिर गई है, उसे ऊँचे उठाना प्रत्येक पत्रकार का कर्त्तव्य है। हमें छिछला साहित्य नहीं, गम्भीर और तत्वपूर्ण साहित्य चाहिए। जनता के मस्तिष्क को गलत वक्तव्यों से दूषित करना देशद्रोह से कम नहीं। यही कारण था कि इतने पत्रों से पिछड़े होने पर भी 'प्रवाह' अत्यधिक लोकप्रिय और सम्मानित होने लगा।

हिमालय और रामेश्वर जी दोनों ही एक दूसरे को पाकर अपने को धन्य समझ रहे थे। दोनों में एक दूसरे के प्रति प्रेम की भावना बढ़ती ही गई और वे पत्र के संचालक अथवा संपादक नहीं बल्कि भाई भाई से मालूम पड़ते थे।

एक दिन रामेश्वर जी ने हिमालय से मुस्कराते हुए कहा—

'क्या जीवन भर अकेले ही रहने का निश्चय कर लिया है ?'

'मै अपने को अकेला तो कभी भी नहीं समझता।

'सो तो ठीक है किन्तु क्या विवाह करने का इरादा नही है ?'

'और आपका ?'

'मेरा, भाई मैंने तो सचमुच ही जीवन पर्यन्त अकेले रहने का निश्चय कर लिया है। मै नही चाहता कि इस विवाह के बन्धन में कभी फँसू, इसे तो मै एक जंजाल समझता हूँ जिससे हमेशा बच कर रहना चाहिए।'

'तो क्या आप विवाह को जजाल समझते है ?'

'विवाह जंजाल नही तो और क्या है। पहले जरूर यह जंजाल नही था किन्तु आजकल तो यह जंजाल से भी बढ़ कर है।'

'किस मानी में !'

'बिना किसी परिचय के पढे लिखे समाज की अपरिचिता कन्या से विवाह कर लेना एक जंजाल ही है।

'क्यों ?'

'शादी के बाद यदि नारी देखती है कि उसके पति की भावनायें उसकी भावनाओ के प्रतिकूल है, दोनों के जजबात एक दूसरे से नही मिलते, पति के पास वह खूबियाँ नहीं है जिन्हें वह चाहती थी, उसके पास वे

साधन नहीं है जिससे वह वहाँ सन्तुष्ट रह सके, उसके हृदय के टुकड़े टुकड़े हो जाते हैं। दोनों में दिन प्रति दिन एक दूसरे की प्रति विरोध की भावनायें बढ़ती जाती है, आगे का जीवन बहुत ही अन्धकारमय हो जाता है। पुरुष न तो उसके जजबातों को कुचल ही सकता है न उन पर अपना अधिकार जमा पाता है। वह किसी अपढ़ समाज की नारी नहीं बल्कि एक पढ़े लिखे समाज की नारी है। जिसे कुचलने की कोशिश करने पर वह क्रुद्ध नागिन की भाँति या तो उसे डँस लेती है अथवा अपने जीवन का कोई अन्य मार्ग ढूंढ़ने लगती है जहाँ वह सुख और सन्तोष की जिन्दगी बिता सके।'

'तो आप पढे लिखे समाज की स्त्री को इतना अधिक उद्दण्ड और उच्छृङ्खल समझते है ?'

'उन्हें हम उद्दण्ड और उच्छृङ्खल नहीं कहते, बल्कि मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि उनकी भावनाओं और स्वाभिमान में इतनी अधिक दृढ़ता आ जाती है कि वे उन पर ठेस लगते कभी नहीं देख सकती। अपने भावों के विकास के साथ साथ वे अपने को इतना बढ़ा चढ़ा समझने लगती है कि उन्हें किसी की बाँदी बनकर रहना असह्य हो जाता है।'

'किन्तु ऐसी सभी नहीं होती।'

'सभी एक से नही होते, यह तो प्रत्येक वर्ग में देखने को मिलेगा।'

'फिर आप किसी अपढ़ लड़की से क्यों नहीं शादी कर लेते?'

'क्योंकि अपढ़ लड़की के साथ मेरा गुज़ारा नही हो सकता।'

'इसके माने है कि समाज की कोई भी नारी इस क़ाबिल नही है कि आप उससे शादी कर सकें?'

'मालूम पड़ता है तुम इस प्रकार छोटी मोटी दलीलों से मेरा पीछा छोड़ने वाले नही हो। भाई, दरअसल बात यह है कि जब मैंने चालीस वर्ष की उम्र तक शादी नहीं की, न किसी को मेरे विवाह की फिक्र ही हुई फिर अब इस ढलती उम्र में क्या शादी करूँ? ये सब तो मैं झूठे बहाने की बातें कह रहा था।'—कह वह ज़ोर से हँस पड़े। किन्तु पुनः बोले—

'देखो, हम कहाँ से कहाँ आ गए। मैंने पूछा था तुम्हारे विवाह के विषय में और तुम मुझ पर आ गये। अच्छा भला बताओ, अब तुम क्यो नही विवाह कर लेते?'

'मैंने भी कुछ ऐसा ही निश्चय कर लिया है कि

जीवन पर्यन्त अविवाहित ही रहूँ।'—हिमालय ने कुछ गम्भीरता पूर्वक कहा।

'क्यों, क्या मुझसे ही विचार तुम्हारे भी है ?'

'जी नही।'

'कुछ तो होंगे ही ?'

'सोचा जाय तो बहुत कुछ है और न सोचा जाय तो कुछ भी नही।'

'मै तुम्हारी बात का अर्थ नहीं समझ सका।'

आपका अर्थ न समझना और मेरा अर्थ न समझाना ही ठीक है। हमारा उस अर्थ की गहराई में न जाना ही उचित है।'—हिमालय ने एक लम्बी साँस भरते हुए कहा।

'मालूम होता है अब धीरे-धीरे तुम बिलकुल दार्शनिक हो हो जाओगे ? अच्छी बात है, जाने दो ! अगर तुम्हें हमारा यह प्रश्न पसंद नही तो मैं कभी भी तुमसे इस विषय पर बहस नही करूँगा। मालूम होता है जीवन में कोई बहुत बडा रहस्य छिपा है जिसे तुम अभी तक मुझसे छिपाये हो। किन्तु कभी न कभी तुम्हारा रहस्य मुझे मालूम हो ही जायेगा। अच्छी बात है, अब मैं जरा शहर जारहा हूँ। आज का अग्रलेख भी तुम्हीं को लिखना है,

देखना कहीं अपनी दार्शनिकता में उसे भूल न जाना वर्ना कल बिना अग्रलेख के ही अखबार निकलेगा।'—कह रामेश्वर जी मुस्कराते हुए हिमालय को अकेला छोड़ कमरे से बाहर हो गये।

हिमालय किसी गम्भीर चिन्ता में खो गया और किसी की स्मृति में उसकी आँखें छलक सी आईं। उसके आगे किरण का धुँधला सा चित्र चित्रित हो उठा—वह कहाँ होगी, कैसी होगी ?

तब तक कम्पोजीटर ने उसके ध्यान को भंग करते हुए कहा—'बाबू जी अग्रलेख।'—और हिमालय 'अभी दिया'—कह तुरन्त अग्रलेख लिखने में मग्न हो गया।

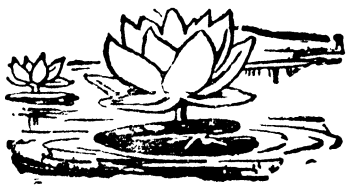

पन्द्रह

एक दिन तनिक देर से छुट्टी होने के कारण किरण बहुत थक सी गई थी। उसने सोचा घर न जाकर यदि किसी अच्छे से उद्यान में चली जाय तो जी भी बहल जायगा और मन का भारीपन भी दूर हो जायगा। उसने स्कूल में ही पूर्णिमा और उसकी माँ से बता दिया कि वह किसी बाग़ में घूमने के अभिप्राय से जा रही है अतएव सम्भव है कुछ देर से भी लौटे। पहले तो उसने उनसे भी चलने को कहा किन्तु वे अपनी थकान को घर पर ही दूर करना चाहती थीं, अतएव किरण को अकेले ही जाना पड़ा। अक्सर पूर्णिमा और उसकी माँ घूमने फिरने में किरण का साथ नही दे पाती थी। कारण उनके लिये कलकत्ते में इतना आकर्षण नहीं था जितना किरण के लिये।

थोड़ी दूर तक पैदल चल कर किरण ट्राम पर सवार हो गई। ट्राम इधर उधर बाज़ारों, लम्बे चौड़े मार्गों, कलकत्ते की घनी बस्तियों में से चक्कर काटती हुई

'ब्यूटी गार्डेन' के पास जाकर रुक गई। किरण वहीं उतर पड़ी, उस समय सामने के घंटाघर की घड़ी में साढ़े पाँच बज रहे थे। वह शीघ्र ही सड़क पार कर एक उद्यान में पहुँच गई।

कितना सुन्दर स्थान है यह, यहाँ कितनी पवित्रता है। यहाँ प्रकृति और मानव दोनो की कलाओ का किस आधुनिक एवं नवीन ढंग से सुन्दर समन्वय किया गया है। दोनों कलाएँ मिल कर एकता के सौदर्य का कितना सजीव, उच्च एवं गम्भीर उदाहरण बन गई है।

चारो तरफ हरी घास की कालीन सी बिछी हुई है जिसे मानव ने आधुनिक ढंग से काट छाँट कर रबड़ से भी अधिक मुलायम और गुदगुदी उत्पन्न करने वाला बना दिया है। उस घास के मैदान के बीच दौड़ती हुई लाल रंग की सड़कें बिलकुल सिन्दूर की रेखाओं सी मालूम पड़ रही हैं। उद्यान के मध्य में एक बड़ा सा सरोवर भी है। सरोवर में एक सुन्दर सा फ़ौव्वारा बना हुआ है जिसमें से अविरल गति से स्वच्छ जल की फुहार बरस रही है। किरण ने सरोवर के उज्ज्वल जल में हाथ डालते हुए अनुभव किया—कितना शीतल और निर्मल है जल! इस जल में कितनी शीतलता होती है। निर्झर के

रूप में मधुर संगीत, सरिता के रूप में आत्मत्याग का परिचय और समुद्र के रूप में हृदय की विशालता का ज्ञान देता है। अपना दुरुपयोग होने पर भी अपनी शीतलता नही खोता, सब को जीवन दान देता है तभी तो इसे हम जीवन भी कहते है। गर्म करने पर भी पुन: धीरे-धीरे यह शीतल होने लगता है। काश, हम भी जल के समान शीतल हो पाते !

उसने देखा सरोवर में कितने ही पद्म फूल खिले हैं, उनके किसलयो पर फौवारे के जलबिन्दु मोती के बिन्दु के समान मालूम हो रहे है जो उन पर अविरल गति से गिरने पर भी ढुलकते जा रहे है, जैसे उन किसलयों में इतनी भी शक्ति नही है कि वे इन जल बिन्दुओं के भार को सम्हाल सकें। उन पद्म दलों में कितना सौदर्य और आकर्षण है। उसके चारो ओर भौरों का झुण्ड गुनगुना रहा है, उन्हें छेड़ रहा है। वायु भी उनसे छेड़खानी करने से नही चूकती।

हरित दूर्वादल के शीतल प्रशस्त बिछौने पर तरुओ की स्निग्ध छाया, छोटे छोटे पौधों पर रंग बिरंगे पुष्पों का सौदर्य, इधर उधर फुदकती, उड़ती चिड़ियों की चपलता, पिक की कूक, विहंगमों का गान, शीतल समीर

किरण की इन्द्रियों में सिहरन सी पैदा कर रहे थे। उसे अपने रूप, अपने सौदर्य की स्मृति हो आई जिसे वह कुछ समय पूर्व ईश्वरीय प्रकोप से खो चुकी थी। वह सोचने लगी, कहीं आज भी उसका वैसा ही रूप होता तो उद्यान में विचरण करने वाले कितनों की ही आँखें उस पर ठहर जातीं। उसे ऐसा मालूम पड़ा जैसे चारो तरफ, रूप का ही बाज़ार फैला है। रूप की ही कद्र है, संसार में बदसूरतों की कोई पूछ नहीं।

उसने उसी उद्यान के एक कोने में बने छोटे देवमंदिर को भी देखा जिसे वह और भी दो तीन बार देख चुकी थी। एक आध बार तो वह पूर्णिमा और उसकी माँ के साथ भी—वहाँ आ चुकी थी। सर्वप्रथम उन्होंने ही उसे उस देवमन्दिर का पता बतलाया था। उसका हृदय मंदिर को देखते ही श्रद्धा से भर आया और उसने सोचा, चलें, सर्वप्रथम देवी को मस्तक नवा लें।

उस मंदिर में दुर्गा की एक छोटी सी मूर्ति स्थापित थी। मन्दिर कोई विशेष बडा न था किन्तु उसके सामने एक बड़ा सा बरामदा था जिसे बहुत से बेघरबार वाले वर्षा, ग्रीष्म और शीत में सोने के काम में लाते थे। कलकत्ते की महान—नगरी में कितने ही ऐसे व्यक्ति

होंगे जिनके पास मकान अथवा रहने की कोई भी सुविधा नहीं है। दिन भर तो वे अपने काम में व्यस्त रहते हैं, अपनी जीविकोपार्जन करते हैं और रात्रि में पार्क के मैदानों अथवा सड़क की पटरियों पर ही अपना बिस्तर तान देते हैं, किन्तु वहाँ भी पुलिस उन्हें चैन से सोने नहीं देती।

इस श्रेणी के व्यक्तियों का यहाँ विशेष जमाव रहता। पुजारी जी के लाख विरोध पर भी कितनों ने ही उसे अपना नित्य का स्थान बना लिया था। मानो उन्हें ईश्वर के चरणों पर पड़े रहने में अत्यधिक सुख और शान्ति का अनुभव होता हो।

किरण ने मन्दिर में प्रवेश किया। देवी की मूर्त्ति के समक्ष पहुँच उसने सर झुकाकर श्रद्धापूर्वक नमस्कार किया उस समय ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो वह देवी से कहा भी हो, तुमने आखिर मेरे पूर्व जन्म के किस अपराध का इतना बड़ा दण्ड दिया है। कुछ काल तक समाधिस्थ रहने के पश्चात् उसने आँखें खोलीं और पुनः नमस्कार कर मन्दिर के प्रवेश द्वार के बाहर हो गई। उस समय उसे ऐसा लगा मानो देवी ने उसे कुरूप कर संसार के समस्त भय से मुक्त कर दिया है। वह कुरूप होने पर

ही इतनी निर्भीक बन सकी है और कोई उसकी ओर आंख उठाकर भी नहीं देख सकता। यदि आज वह कुरूप न होती तो संभवत: इस प्रकार अकेली यहाँ घूमने भी न आती।

मन्दिर से निकल कर किरण कुछ देर तक इधर उधर भटकती रही फिर अन्त में थक कहीं एकान्त में बैठने का उसने निश्चय किया और उद्यान के उस भाग की ओर जा पहुँची जहाँ बहुत कम लोग ही जाते थे। कभी कदा स्त्री पुरुष के जोड़े एकान्तवास के लिए वहाँ ज़रूर पहुँच जाते थे। वह एक विशाल बरगद के पेड़ के नीचे बैठ गई जो सौ वर्ष से भी अधिक पुराना रहा होगा और जिसकी अनेक जड़ें शाखाओं से फूट पृथ्वी का स्पर्श कर रही थीं। बहुत सी जड़ों ने तो मज़बूत खम्भों का रूप धारण कर लिया था। उस समय घण्टाघर में सात बज रहा था, उसने सोचा आध घंटे और बैठ कर वह पुन: वापस चली जायगी। धीरे धीरे अन्धकार बढ़ता ही जा रहा था, चिड़ियाँ झुण्ड की झुण्ड अपने अपने नीड़ों की ओर प्रस्थान कर रही थीं। सूर्य की लालिमा मिट चुकी थी और संध्या की कालिमा घनी होती जा रही थी। इसी समय उसने देखा, एक टैक्सी उसके सामने से होती हुई

उसी से थोड़ी ही दूर पर लगे एक अन्य वट वृक्ष के नीचे जाकर रुक गई। वह टैक्सी ऐसे स्थान पर रुकी थी जहाँ शायद ही कभी कदा कोई घूमने अथवा विश्राम करने के अभिप्राय से चला जाता हो। ड्राइवर टैक्सी ड्राइव कर रहा था और पिछली सीट पर आलिंगन में बँधा हुआ एक स्त्री पुरुष का जोड़ा था जो शीघ्र ही उसके सामने से एक छाया के समान निकल गया। किरण उन्हें ठीक प्रकार से न देख पाई फिर भी थोड़ी ही देर में उसे उनके वार्तालाप का कुछ कुछ अंश सुनाई पड़ गया था।

इस समय तक काफ़ी शाम हो चुकी थी, धीरे धीरे उद्यान की चहल पहल कम हो रही थी, चारो तरफ सन्नाटा सा छाने लगा। किरण ने आँखें उठा कर देखा। समस्त कलकत्ता नगरी विद्युत के प्रकाश में जगमग जगमग होने लगी थी। गगनचुम्बी उच्च अट्टालिकाओं में दीवाली सी छा गई थी। सामने घण्टाघर भी बिजली के प्रकाश में चमक सा उठा था और उसके घड़ी की छोटी बड़ी सूई मिल कर साढ़े सात बजा रही थी। बाहर घूमते बहुत देर हो चुकी थी उसे अब तक घर वापस चला जाना चाहिये था किन्तु वह उस युवक और युवती की बात पर ही विचार कर रही थी।

उसने अनुमान लगा लिया, ये या तो कहीं से भाग कर आये है अथवा अपने परिवार वालों से छिप कर सम्बन्ध स्थापित करना चाहते हैं। वे एक दूसरे से प्रेम करते हैं और बिना एक दूसरे के नहीं रह सकते। प्रेम की स्मृति करते ही उसे हिमालय की याद हो आई। क्या वह भी हिमालय से प्रेम करती थी, क्या हिमालय को उससे प्रेम नहीं था? लेकिन वह अब तक इस निर्णय पर नही पहुँच पाई थी कि वे एक दूसरे को प्यार करते थे अथवा नहीं? यदि उसमें और हिमालय में प्रेम नही तो और क्या था? मनुष्य की बहुधा ऐसी मानसिक स्थिति होती है कि वह स्वयं अपने मस्तिष्क की प्रतिक्रियाओं को नहीं जान पाता। किरण का हिमालय से प्रेम था अथवा सहानुभूति, वह स्वयं न निश्चय कर पाती थी।

प्रेम की परिभाषा अत्यन्त कठिन है। प्रेम वास्तव में क्या है, यह कुछ भी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। प्रेम के विभिन्न रूप में अनेक माने हो जाते है। दो हृदयों का एक दूसरे के प्रति असीम अनुराग ही विशेषत: प्रेम की परिभाषा मानी जाती है। लेकिन हम इससे सहमत नही। एक नारी एक पुरुष से प्रेम करती है, भक्त को अपने भगवान से प्रेम होता है, राजा को अपनी

प्रजा से प्रेम होता है, बच्चों को अपने खिलौने से प्रेम होता है—फिर प्रेम शब्द एक ही होते हुए भी उसके कितने माने निकलते हैं, उन सभी प्रेमों में क्या अन्तर नहीं है ? फिर हम कैसे प्रेम शब्द की एक छोटे से वाक्य में परिभाषा दे सकते हैं।

फिर भी हमें प्रेम के लिये मन को स्थिर करना ही पड़ेगा। प्रेम के हम दो रूप मानेंगे। एक रूप तो वह जिसमें हम प्रेम के पीछे वासना को पाते हैं, दूसरा प्रेम वह होता है जिसे हम सही शब्दों में भक्ति और आदर कहते हैं। किन्तु इसमे भी हमे बड़ी कठिनाई पड़ती है। यदि पति-पत्नी में प्रेम है तो वहां वासना, भक्ति और आदर तीनों का ही समावेश होता है। इस प्रकार प्रेम हमारे लिये दर्शन शास्त्र का विषय बन जाता है। अतएव हम प्रेम की उन गहराइयों में न घुस, उसे उसी दुनियादारी के रूप में देखेंगे जिसमें हम उसे देखते है। प्रेम में हमें सहानुभूति और वासना दोनों ही मिलती हैं। प्रेम भावनाओं से आँकी जा सकती है। अतएव यदि हम यह कहें कि अमुक स्त्री और पुरुष में प्रेम होने पर भी वासना अथवा ऐन्द्रिक आकर्षण नहीं था तो कुछ माने में हम गलत भी हो सकते हैं। भले ही उस समय उनमें यह

भावना न रही हो किन्तु आगे भी एक दूसरे के निकट पहुँचने पर भी उनकी वासना दों ही दबी रह जाये तो हम विश्वास नही कर सकते। यदि ऐसा होता है तो हम उसे प्रेम नहीं भक्ति, आदर अथवा स्नेह मात्र ही कह सकते है।

किरण को ऐसा मालूम होने लगा जैसे वह हिमालय को प्यार करती थी और हिमालय को भी उससे प्रेम था। वे एक दूसरे को बहुत चाहते थे किन्तु बीच की गहराइयों को देख एक दूसरे के निकट पहुँचने का साहस नही कर पाते थे। किन्तु अब उसे किसी का भय नहीं, अब हिमालय मिले तो वह उससे अवश्य.....! छि: वह भी कैसी बातें सोचने लगती है। क्या हिमालय उसे अब भी उसी प्रकार प्यार कर सकता है जैसे वह पहले करता था? क्यों नही? वह अपनी किरण को इस रूप में तो क्या बुरे से बुरे रूप में भी नही त्याग सकता। उसके हृदय में उसके प्रति प्रेम की भावना सदैव अमर रहेगी।

किरण इन्हीं भावनाओं में डूबी थी कि उसके कानों में सहसा एक जोर की चीख सुनायी पड़ी, उसे ऐसा मालूम पड़ा मानो किसी ने उस युवक के हृदय में तेज़

छुरा भोंक दिया हो। उसने तुरन्त आगे बढ़ कर देखा, बिजली के मन्द प्रकाश में कोई घरानायी है और उसकी छाती में छूरा चमचमा रहा है। इसी समय वह युवती तेजी के साथ टैक्सी पर बैठ गई और टैक्सीवाले ने मोटर मोड़ भागना चाहा। किरण ने अन्य कोई उपाय न देख अपने सामने पडा बड़ा सा पत्थर उठा भागती हुई मोटर के सामने के शीशे पर दे मारा। पत्थर तेजी के साथ पड़ा और शीशा चूर चूर हो गया। ड्राइवर बुरी तरह से आहत हो गया, उसके आंख और अन्य अंग में शीशे धंस गये थे। युवती भी आहत हो गयी थी। पीछे बैठे रहने पर भी उसके शरीर में शीशे घुस गये थे। तब तक किरण का शोरगुल सुन लोग इकट्ठे होने लगे थे और मोटर थोड़ी दूर चल कर उसी उद्यान के एक पेड़ से टकरा कर रुक गई। ड्राइवर ने उस आहत दशा में भी भागने का प्रयत्न किया किन्तु सफल न हो सका।

युवती ने उतर कर भागना चाहा किन्तु छोटी मोटी भीड़ को देख कुछ घबड़ा सी गई और उसी बीच क्रुद्ध सिंहिनी की भाँति झपट किरण ने उसे अपने बलिष्ट हाथों में जकड़ लिया। वह थर थर कांप रही थी, यदि किरण अकेले होती तो उसे छुड़ा वह भागने का प्रयास

भी करती किन्तु उस भीड़ के सामने वह ऐसा न कर सकी। उसकी आँखें भय से भर गईं, वह घबड़ा सी उठी, शायद इस अनहोनी घटना के लिये वह तत्पर भी न थी। रक्तरंजित ड्राइवर भय से मोटर पर ही ढुलँगा पड़ा रहा। युवती के भी विभिन्न अंगों से खून बह रहा था।

'इन्होंने हत्या की है।'—किरण ने चिल्लाकर कहा। तबतक कुछ पुलिस वाले भी आ चुके थे। उन्होंने पूछा—

'किसकी ?'

'यहीं पास में पीछे एक युवक की लाश पड़ी है।'

'किधर ?'—कह पुलिस और भीड़ उस युवती और ड्राइवर को गिरफ्तार कर किरण के पीछे पीछे चलने लगी।

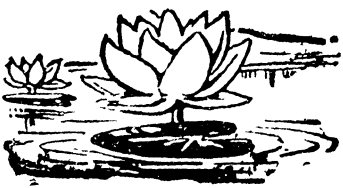

सोलह

जिस समय युवक की लाश रोशनी में जाकर देखी गई, किरण मूर्छित हो गिर पड़ी।

लाश एक पढ़े लिखे अपटूडेट युवक की थी, उसकी छाती में तेज छुरा घुसा था उसके कीमती विदेशी ढंग के कपड़े रक्तरंजित हो उठे। उस खूबसूरत नर्म घास पर भी खून के दाग पड़ गए थे। किरण ने जब युवक का मुँह देखा, काँप उठी और लड़खड़ा कर वहीं पुलिस के सामने गिर पड़ी। इस समय तक पुलिस और फर्स्ट एड की लारी भी आ चुकी थी। पुलिस किरण और उस टैक्सी ड्राइवर तथा उस युवती को लेकर थाने की ओर चली गई और युवक की लाश सरकारी अस्पताल को भेज दी गई। युवक की धीरे धीरे साँस चल रही थी और उसे अभी बचाया जा सकता था क्योंकि छुरा पूरी तरह से नहीं घुस सका था।

जिस समय किरण की मूर्च्छा टूटी उसने देखा, वह किसी थाने पर है और पुलिस वाले उसे घेरे खड़े हैं।

पुलिस के बड़े बड़े कर्मचारी जैसे उसके जागने की प्रतीक्षा कर रहे हों। उसके पास ही एक डाक्टर भी खड़े थे जिनकी सहायता से उसकी मूर्च्छा दूर की जा सकी थी। किरण की मूर्च्छा दूर होने पर डाक्टर, टैक्सी ड्राइवर और उस युवती के प्रारंभिक उपचार में लग गए जिससे उसका बयान आदि लिया जा सके।

किरण मूर्च्छा टूटते ही चिल्ला पड़ी—'उनकी लाश कहां है? वह कहां हैं? वह कभी नहीं मर सकते, उन्हें कोई भी नहीं मार सकता।'

पुलिस वाले विस्मय से उसकी ओर देखने लगे। क्या वह उस लाश को पहचानती है, क्या यह लाश उसके किसी परिचित अथवा निकट के सम्बन्धी की है? नहीं, हो सकता है यह सब उन्माद में बक रही हो, आखिर नारी हृदय जो ठहरा। कठोर से कठोर हृदय की नारी का भी दिल पसीज ही उठता है।

जिस समय किरण ने उस लाश को देखा, वह सन्न रह गई, यह तो उसके पति की लाश थी। वह तो वही थ। वह राममोहन थे, और फिर वह अपने को न सम्हाल सकी और मूर्छित हो गिर पड़ी। किन्तु अब वह वास्तविक

परिस्थिति को समझ गई थी और अपने को स्वस्थ बना पुलिस को बयान देने लगी।

पुलिस ने पूछा—'आप उन्हें जानती हैं ?'

'जी नहीं !'

'फिर अभी आप यह सब बड़बड़ा रही थीं ?'

'क्या ?'

'आप को नहीं मालूम ?'—पुलिस अफ़सर ने आश्चर्य से पूछा।

'जी नहीं।'

'आप उसी लाश के बारे में बड़बड़ा रही थीं। आपके बड़बड़ाने से ऐसा मालूम पड़ा जैसे आप उसे पहचानती हों ?'

'हो सकता है ऐसा मैं बेहोशी की हालत में हत्या के दृश्य से घबड़ा कर बड़बड़ाती रही हूँ।'

'ओह !'—और फिर तहकीक़ात में लग गई।

किरण ने जो कुछ भी घटना देखी थी और जो कुछ भी उनका वार्तालाप सुना था, सब कुछ सचसच उसी रूप में पुलिस को बता गई। उसके बयान समाप्त होते ही पुलिस चौकी के टेलीफोन की घण्टी टनटना उठी।

'हल्लो'—पुलिस के उच्च कर्मचारी ने कहा।

'गवर्नमेन्ट हास्पिटल स्पीकिंग ।'

'यस, डलहौजी पुलिस पोस्ट ।'

'वह आदमी बच जायगा ।'

'बच जायेगा ! दैट इज़ ओ के ।' कह पुलिस अफसर ने फोन का रिसीवर रख दिया और किरण की ओर मुड़ कर बोला—'आपकी जल्दी और बहादुरी से उस आदमी की जान बच गई और अब वह अच्छा हो जायगा, सरकारी अस्पताल से फोन आया था। आप अपना पता दे दें और अब आप जा सकती हैं। जब भी आप की अथवा आपके बयान की ज़रूरत होगी, आपको खबर पहुँच जायगी। अब तो मरीज के बच जाने से सही वारदात के पता लग जाने पर मुकदमा और भी आसान हो जायगा। आपको तकलीफ हुई है और शायद पुलिस अभी आपको और भी तकलीफ दे। सम्भव है हमें अभी आपकी और भी मदद की ज़रूरत पड़े। इसके लिये हम आप से क्षमा चाहते हैं। कृपया इस पुलिस वाले को अपना सही सही पता दे दें। अनेक धन्यवाद'—कह उसने एक पुलिसवाले से किरण का सही सही परिचय लिखने को इशारा कर दिया।

पुलिस वाले ने पूछा—'आप का नाम ?'

'किरण ?'

'पता ?'

'भवानीदत्त लेन, मकान नम्बर इक्यावन बटा तीन हजार, फ्लैट नम्बर पच्चास ।'

'आपके और भी कोई है ?'

'जी नहीं !'

'पिता का नाम ?'

'मालूम नहीं !'—किरण ने कुछ रुक कर कहा ।

'आपको अपने पिता का नाम नहीं मालूम ?'—पुलिस वाले ने आश्चर्य के साथ पूछा ।

'जी, जिस समय पैदा हुई थी, मेरी माँ मुझे अपना पाप छिपाने के लिये कहीं कपड़े में लिपटा छोड़ गई थी । किसी ने मुझे देख लिया और अपने पास पाल पोस कर इतना बड़ा किया है ।'—किरण ने अपने को छिपाने के अभिप्राय से यह बात कह डाली, वह किसी को भी अपना वास्तविक परिचय नहीं देना चाहती थी ।

पुलिसवाले ने एक बार पुनः उसकी ओर आश्चर्य भरी दृष्टि से देखा और अपने कार्य में व्यस्त हो गया ।

'क्या करती हैं आप ?'

'आदर्श कन्या हाई स्कूल में अध्यापिका हूँ ।'

'आपके साथ और कोई भी रहता है।'

'जी।'

'कौन ?'

'उसी स्कूल की प्रधान अध्यापिका और उनकी लड़की।'

पुलिसवाले ने किरण के सब बयान को लिख लेने के बाद उसे एक बार फिर से दोहराया और उसने अँगूठे का निशान और हस्ताक्षर लेकर उसे छोड़ दिया। —'अब आप जा सकती हैं, तकलीफ़ के लिये माफ़ करेंगी। क्या बतायें साहब महकमा ही ऐसा है कि छोटी छोटी बातें भी पूछनी पड़ती हैं।'

थाने से छुट्टी पाते ही किरण सर्वप्रथम सरकारी अस्पताल गई, वह राममोहन को देखने की उत्कट इच्छा को न रोक सकी। किन्तु इतनी तेजी से भाग कर जाने पर भी जब उसे मरीज को देखने की अनुमति नहीं मिली वह हताश हो वहीं बैठ गई। किसी प्रकार दरवाजे से ही मालूम कर कि मरीज की हालत बहुत सुधर रही है, बच जायेगा, हृदय में एक सन्तोष की सांस ले धीरे धीरे भारी मन से अपने घर की ओर चल पड़ी। संभवतः यदि राममोहन की अवस्था में सुधार का समाचार उसे

न मिलता तो वह अपना धैर्य खो बैठती। आशा के एक धुंधले से दीपक में भी मनुष्य को कितनी बड़ी सांत्वना मिल जाती है।

जिस समय किरण घर पहुँची रात्रि के साढ़े बारह बज चुके थे और पूर्णिमा तथा उसकी माँ चिन्ता और प्रतीक्षा में चिन्तित बैठी थीं। आज इतनी देर हो गयी किन्तु वह अभी तक क्यों नहीं आई, कहाँ चली गई ?

जिस समय किरण ने दरवाजा खटखटाया वह जाग रही थीं और उसके एक ही शब्द में दरवाजे खुल गये। किरण ने जब घर में प्रवेश किया उसकी मुख मुद्रा से साफ मालूम पड़ रहा था कि वह बहुत ही परेशान और थकी है।

'आज इतनी देर कहाँ लगा दी किरण, बड़ी चिन्ता लगी थी। आज क्यों इतनी परेशान और थकी सी मालूम पड़ रही हो, क्या बात है ?'—पूर्णिमा की माँ ने किरण से प्रश्न किया।

'कुछ नहीं माँ।'—कह किरण उनकी गोद में गिर पड़ी और सिसकने लगी। धीरे धीरे उसने आज की समस्त घटना सच सच बतला दी और साथ ही साथ यह भी बतला दिया कि वह उसके पति ही थे। वे

विस्मय से किरण की ओर देख रही थीं। किरण ने उनसे यह भी बतला दिया कि उसने अपना परिचय गुप्त रखने के लिए पुलिस से यह बता आई है कि उसके माँ बाप किसी का भी पता नहीं, वे अपना पाप छिपाने के लिये उसे यों ही सड़क के कोने में फेंक गये थे जहाँ पूर्णिमा की माँ ने उसे पड़ा पाया था और पाल पोस कर बड़ा किया है।

पूर्णिमा की माँ किरण के इस साहस और बुद्धि पर मुग्ध सी हो गई थीं। किरण का ज्ञान कितना बढ़ा चढ़ा है। शायद यह शिक्षा का ही प्रभाव है जिसने किरण को अकेले ही संसार में खड़े होने के योग्य बना दिया है। यदि किरण के स्थान पर अन्य कोई अपढ़ स्त्री होती तो इतनी कठिनाइयों से युद्ध करने के पूर्व ही अपने पति के व्यवहारों से सिवा इसके कि गले में फाँसी लगा अथवा शरीर पर मिट्टी का तेल छिड़क आग लगा आत्म हत्या कर लेती, अन्य कुछ न कर पाती।

शिक्षा में मनुष्य को शक्ति प्रदान करने की कितनी सामर्थ्य है। किरण ने किस धैर्य से काम लिया है। वह साधारण स्त्री से कहीं ऊँची मालूम होती है तभी तो उसके चरित्र में इतनी विशेषतायें हैं। यदि कभी कोई

कमजोरी प्रकट भी हो जाती है तो वह नारी के मृदुल स्वभाव में परे होने पर भी हो ही जाता है। किन्तु उसने जिस प्रकार एक व्यक्ति को हत्या होने से रक्षा की थी, अपने धैर्य और साहस को नहीं खोया, वह कोई साधारण बात नहीं है। किरण सी चरित्र दृढ़ता साधारण नारी वर्ग में नहीं आ सकती, उसके लिये उसे पत्थर से भी कठोर और फूल से अधिक कोमल बनना पड़ेगा। भय अथवा डर से भागना नारी का सौन्दर्य नहीं, जीवन से विक्षिप्त हो आत्मघात कर लेने में नारी की खूबसूरती नहीं होती। उसे भी डट कर परिस्थितियों का मुकाबला करते रहना चाहिये और समय के साथ साथ अपने हृदय को भी मोड़ते रहना चाहिये। जीवन पथ पर किसी का सहारा कब तक दे सकता है अतएव उसे भी स्वावलम्बी बनना होगा। दुख और अशान्ति से घबड़ा रोते रहने में नारी की सुन्दरता नहीं निखरती, उसे साहस और धैर्य दोनों धारण करना होगा। इसी से उसकी सच्ची खूबसूरती की झलक मिल सकेगी।

———

सत्रह

आधी रात बीतने पर करीब एक बजे राममोहन को कुछ कुछ होश आया, उसने देखा वह एक अस्पताल के वार्ड में पड़ा है। उसके कमरे में विद्युत का प्रकाश है और एक दो पुलिस के कर्मचारी तथा डाक्टर और नर्स उसे घेरे खड़े हैं। उसे घोर पीड़ा का अनुभव हुआ और वह कराहने के साथ साथ छटपटाने भी लगा। धीरे धीरे उसने फिर आखें बन्द कर लीं, डाक्टर ने उसे ऐसी दवा दे दी कि उसे पुनः शीघ्र ही नींद आ जाय।

'बच जाने की अब पूरी उम्मीद है।' डाक्टर ने पुलिस कर्मचारियों से कहा।

'इनका बयान कैसे लिया जाय ?'

'अभी तो सम्भव नहीं है।'

'किन्तु जीवन में कोई खतरा होने पर फिर बयान कैसे लिया जा सकेगा ?'

'यह तो ठीक है, लेकिन अभी तो यह कुछ भी न

बता सकेंगे।'

'फिर ?'

'मेरे ख्याल से, अभी मृत्यु की कोई विशेष आशंका नहीं मालूम पड़ती है फिर अभी एक दो दिन तो नहीं मर सकते।'

'तो फिर कब बयान लिया जाय ?'

'कल दोपहर तक यह अपना बयान देने के काबिल हो जायेंगे तभी इनका बयान ले लीजियेगा।' डाक्टर ने कहा।

'छुरा कहां और कितना घुसा था ?'

'हार्ट से डेढ़ इञ्च दायें, और लगभग दो इञ्च अन्दर तक। मालूम होता है जल्दी में हत्यारा अधिक वेग और निशाने के साथ छुरा नहीं मार सका, वरना इन्हें तो उसी वक्त खत्म हो जाना था।'

'अच्छी बात है। हम लोग कल दोपहर तक आकर इनके बयान ले लेंगे। लेकिन डाक्टर साहब जरा ख्याल रखियेगा कि कहीं ये बयान देने के पूर्व ही कूच न कर जायें, वरना बैठे बिठाये एक और परेशानी हो। अच्छी बात है गुडनाइट, अब कल मुलाकात होगी।' कह वे

सत्रह

आधी रात बीतने पर करीब एक बजे राममोहन को कुछ कुछ होश आया, उसने देखा वह एक अस्पताल के वार्ड में पड़ा है। उसके कमरे में विद्युत का प्रकाश है और एक दो पुलिस के कर्मचारी तथा डाक्टर और नर्स उसे घेरे खड़े हैं। उसे घोर पीड़ा का अनुभव हुआ और वह कराहने के साथ साथ छटपटाने भी लगा। धीरे धीरे उसने फिर आंखें बन्द कर लीं, डाक्टर ने उसे ऐसी दवा दे दी कि उसे पुनः शीघ्र ही नींद आ जाय।

'बच जाने की अब पूरी उम्मीद है।' डाक्टर ने पुलिस कर्मचारियों से कहा।

'इनका बयान कैसे लिया जाय?'

'अभी तो सम्भव नहीं है।'

'किन्तु जीवन में कोई खतरा होने पर फिर बयान कैसे लिया जा सकेगा?'

'यह तो ठीक है, लेकिन अभी तो यह कुछ भी न

बता सकेंगे ।'

'फिर ?'

'मेरे ख्याल से, अभी मृत्यु की कोई विशेष आशंका नहीं मालूम पड़ती है फिर अभी एक दो दिन तो नहीं मर सकते ।'

'तो फिर कब बयान लिया जाय ?'

'कल दोपहर तक यह अपना बयान देने के काबिल हो जायेंगे तभी इनका बयान ले लीजियगा ।' डाक्टर ने कहा ।

'छुरा कहां और कितना घुसा था ?'

'हार्ट से डेढ़ इञ्च दायें, और लगभग दो इञ्च अन्दर तक। मालूम होता है जल्दी में हत्यारा अधिक वेग और निशाने के साथ छुरा नहीं मार सका, वरना इन्हें तो उसी वक्त खत्म हो जाना था ।'

'अच्छी बात है । हम लोग कल दोपहर तक आकर इनके बयान ले लेंगे । लेकिन डाक्टर साहब जरा ख्याल रखियेगा कि कहीं ये बयान देने के पूर्व ही कूच न कर जायें, वरना बैठे बिठाये एक और परेशानी हो । अच्छी बात है गुडनाइट, अब कल मुलाकात होगी ।' कह वे

हँसते हुए चले गये और डाक्टर साहब मरीज की परीक्षा तथा चिकित्सा में संलग्न हो गये।

दूसरे दिन लगभग दस बजे राममोहन को पूरी तरह से होश आ गया था और वह अपनी स्थिति को समझने लगा था। इस समय तक उसकी पीड़ा कुछ कम हो चुकी थी। उसने डाक्टर की ओर कृतज्ञतापूर्ण नेत्रों से देखते हुए कहा—'डाक्टर!'

'आप जरा भी चिन्ता न करें, आप बिलकुल स्वस्थ हो जायेंगे।' कह डाक्टर उसके उपचार करने में जुट गये।

दिन के बारह बजे पुलिस के दो अफसर एक क्लर्क के साथ आ गये। पुलिस के उच्च कर्मचारी ने डाक्टर से कहा—'देखिये हम लोग ठीक वक्त पर आ गये न?'

'ओ यस!'

'कहिये पेशेन्ट की क्या हालत है?'

'अभी बहुत अच्छी तो नहीं है किन्तु फिर भी वह इस काबिल तो हो ही गया है कि अपने बयान दे सके?'

'तो फिर अब हम उसके बयान ले सकते हैं?'

'जी हां! लेकिन जरा ख्याल रखियगा, मरीज पर

अधिक जोर न पड़ और उसे बीच बीच में रेस्ट का भी मौका मिल सके।'

'जी इसका हम पूरा ख्याल रखेंगे आप चिन्ता न करें।' कह वह मरीज का बयान लेने को उद्यत हो गये। उन्होंने देखा मरीज आंखे बन्द किये कुछ शान्ति का अनुभव कर रहा है।

'कहिये अब कैसी तबियत है?' पुलिस वालों ने प्रश्न किया।

राममोहन ने धीरे से आंख खोल कर देखा, उसके सामने पुलिस के दो अफसर खड़े है और उनके बगल में एक बयान लिखने वाला। वह जैसे उनका आशय समझ सा गया। उसने धीरे से कहा—

'जी, ठीक है।'

'हम आपका बयान लेने आये है।'

'अच्छी बात है।'

'आपका नाम?'

'राममोहन।'

'पिता का नाम?'

'डा० बृजमोहन व्यास।'

'क्या करते है ?'

'डाक्टर थे, किन्तु कुछ दिन हुए मृत्यु हो गई।'

'कहा रहते है ?'

'इलाहाबाद।'

'पता ?'

'दारागज, प्रयाग।' राममोहन ने थकते हुए कहा।

'अच्छा, थोड़ा आप सुस्ता ले, हम फिर जरा देर मे बयान ले लेगे।'

किन्तु राममोहन ने कहा—'जो कुछ भी पूछना हो अभी पूछ ले।'

'आपके और कोई है ?'

'जी नही।'

'आप अविवाहित है ?'

'जी, लेकिन पत्नी मर गई।'

'कलकत्ते में कहां ठहरे है ?'

'न्यू इंगलिश होटल।'

'किसी काम से आये थे कलकत्ते ?'

'जी नही।'

'फिर यों ही ?'

'जी।'

'आप वैसे करते क्या है ?'

'कुछ भी नहीं।'

'कहाँ तक पढ़े है ?'

'एम० ए० तक।'

'कहाँ ?'

'वहीं इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में।'

उस समय तक राममोहन बहुत थक सा गया था। पुलिसवालों ने सोचा कहीं अधिक जोर न पड़ जाये अतएव उन्होंने कहा—'अच्छा अब आप थोड़ा आराम कर लें और बाकी चीजें हम दस मिनट बाद पूछ लेंगे।

राममोहन ने आंखे बन्द कर लीं और वे बाहर आकर सिगरेट पीने लगे। दस मिनट बाद पुनः राममोहन के पास जाकर बोले—

'अब आपने सुस्ता लिया होगा ?'

राममोहन ने उत्तर स्वरूप आखें खोल दी।

'कल शामको उस पार्क में आपके साथ वह महिला कौन सी थी ?'

राममोहन ने कहा—'इलाहाबाद में उसकी और मेरी मैत्री हो गयी थी। उसका उसके भाई के अलावा और

कोई भी नहीं है। मुझे उससे प्रेम सा हो गया और मैंने उससे विवाह का प्रस्ताव रखा। उसने कहा, यहाँ हमारे भाई किसी भी हालत में हम दोनों को आपस में शादी नहीं करने देंगे। यदि हम दोनों कहीं भाग चलें तभी यह सम्भव हो सकता है।'

उसी के प्रस्ताव पर मैं दो दिन पूर्व उसके साथ कलकत्ते भाग आया। कल जब उस पार्क में हम दो विवाह की बात कर रहे थे तभी पीछे से एकाएक टैक्सी ड्राइवर ने आकर मेरे छुरा भोंक दिया। बस इतना ही मैं गिरते गिरते देख सका।

'टैक्सी ड्राइवर ने आप के छुरा क्यों भोंका कुछ आप बता सकते है ?'

'जी नहीं ?'

'उस महिला का भी इसमें हाथ है, इस विषय में आप कुछ कह सकते है ?'

'मैं कुछ भी नहीं बता सकता, बहुत थक गया हूँ, बड़ा दर्द हो रहा है।'

कह राममोहन पीड़ा से कराहने लगा। जोर पड़ने के कारण घाव का दर्द बढ़ गया था। पुलिसवालों ने

अब उससे कुछ और अधिक पूछना उचित न समझा और वे उसके इसी बयान पर उसके अँगूठे की मोहर ले चले गये। डाक्टर साहब ने गवाह के रूप में हस्ताक्षर किया और फिर मरीज के उपचार मे जुट गये। उन्होंने एक मल्हम लेकर मरीज के सर पर मल दिया जिससे शीघ्र ही उसे नींद आ गई और डाक्टर साहब अन्य मरीजों की देखरेख मे चले गये।

अठारह

राममोहन का बयान पुलिस ले ही चुकी थी अब उसके ड्राइवर और युवती का भी बयान लेना प्रारम्भ कर दिया। गत रात्रि को वे दोनों पीड़ा से इस कदर कराह रहे थे कि उन से बयान लेना किसी प्रकार भी सम्भव न था। डाक्टर ने उनके बदन में चुभे हुए शीशों को निकाल प्रारम्भिक चिकित्सा भी कर डाली थी जिससे अब उन्हें थोड़ी राहत भी मिलने लगी थी। किन्तु थाने की ऊँची दीवारों और कोठरियों के बड़े बड़े सीकचों और पत्थर के बिछौने ने उनकी पीड़ा और भी अधिक बढ़ा दी थी। जिस समय पुलिस ने टैक्सी ड्राइवर का बयान लेने को बुलवाया, पहले तो उसने किसी भी प्रकार की बात बताने से इनकार कर दिया किन्तु एक तो घाव की पीड़ा दूसरे मार के भय ने उसे सब कुछ सच सच कहने पर मजबूर कर दिया। उसके धैर्य और साहस का बांध टूट गया और वह फूट फूट कर रोने लगा।

'सरकार मेरी कोई भी गलती नहीं है, मैं बिलकुल निरपराध हूँ, मुझे छोड़ दें। मैं सब कुछ सच सच बता दूँगा, जरा भी झूठ न बोलूँगा। बड़ा गरीब आदमी हूँ।' कह वह पुलिस अफसर के चरणों पर गिर पड़ा। उसके अंग अंग में पट्टियाँ बँधी थी यहा तक कि आंखें भी उससे अछूती न बच सकी थी।

'अगर तुम सब कुछ सच सच बता दोगे तब तुम्हें छोड़ा भी जा सकता है।' पुलिस कर्मचारी ने कहा।

'जी सरकार सब कुछ सच सच बता दूँगा।'

'उनकी हत्या करने की कोशिश किसने की थी?'

'सरकार छूरा तो हमने ही मारा था, लेकिन मुझसे मारने को कहा गया था।'

'किसने कहा था?'

'एक आदमी ने, जो मेम साहब का दोस्त मालूम होता था।'

'क्या कहा था उसने?'

'अब कल दिन को मैं न्यू इंगलिश होटल के पास अपनी टैक्सी लिये खड़ा था, एक आदमी ने मुझे इशारे से अपने पास बुलाया। पहले तो मैं अपनी टैक्सी छोड़

कर नहीं जाना चाहता था किन्तु उसके बार बार बुलाने पर जाना ही पड़ा। वह मुझे एक एकान्त की जगह में ले गया। वहां मेरे हाथ में सौ का नोट देते हुए उसने कहा—

'यह इनाम लो, इतना ही इनाम और भी मिलेगा।'

पहले तो मैं घबड़ा सा गया, जाने किस बात का इनाम मिल रहा है आखिर बात क्या है! किन्तु उसे देख मेरा जी अन्दर ही अन्दर मचल सा उठा और मै उस नोट का लोभ न रोक सका। मुझ जैसा कोई भी गरीब आदमी जो आसानी से अपने बाल बच्चों का पेट भी न पाल पाता हो कैसे इस लोभ से बच सकता था। मैंने उससे पूछा—

'क्या बात है?'

उसने कहा—'घबड़ाओ नहीं, तुम्हें एक काम करना होगा।'

'कौन सा?'

'हत्या!'

'हत्या!'

'हां, हत्या! कर सकोगे?'

कुछ देर सोचने के बाद मैंने पूछा—'किस की?'

'यह सब बता दिया जायगा।'

'लेकिन मैं यह नहीं कर सकता।' मैंने कुछ सोच कर उसका नोट लौटालते हुए कहा।

'मुफ्त के दो सौ रुपये खो रहे हो।'

'कैसे होगा ?' मैं नोट का मोह न त्याग सका।

'यह सब मैं बता दूँगा।'

'तो फिर बताइये।'

'तुम्हारे साथ एक साहब और मेम साहब तुम्हारी टैक्सी पर कहीं घूमने जायेंगे। उन्हें किसी सूनसान बाग में ले जाना, बल्कि साहब जिस बाग में कहें वहीं ले जाना। देखो उन्हें किसी तरह का सन्देह न होने पाये, पर वीराने का जरूर ख्याल रखना। वहां मेम साहब उनसे बात करती रहेंगी और जैसे ही तुम उनकी आँखों का इशारा पाना छुरा साहब की छाती में भोंक देना जिससे वह चिल्ला भी न सकें और उसी वक्त तुरन्त मेम साहब को अपनी टैक्सी पर बिठा यहीं भाग आना। देखो बहुत ही सावधानी से काम करना, कहीं घबड़ा न जाना।

'छुरा कहां मिलेगा ?'

'वह भी मैं तुम्हें अभी दे दूंगा।'

मैंने सौ का नोट ले लिया और उनकी प्रतीक्षा करने लगा थोड़ी ही देर में उन्होंने लाकर एक छूरा भी मुझे छुपा कर दे दिया। जिस बीच वह चले गये थे इच्छा तो हुई टैक्सी और नोट लेकर भाग जाऊँ पर सौ रुपयों का और लोभ तथा पकड़ जाने के भय से मुझे ऐसा नहीं करने दिया। मैंने उन्हें बचन दिया कि वह जैसा भी कहते हैं, बिलकुल वैसा ही करूंगा। बस वह करीब तीन बजे मेरी टैक्सी को न्यू इंगलिश होटल के सामने ले जाकर कहीं चले गयें और थोड़ी ही देर में एक साहब और मेमसाहब मेरी मोटर पर आकर बैठ गये। वे वही थे जिन्होंने बताया था। पहले तो इधर उधर घूमते रहे किन्तु अन्त में उसी पार्क में गये जहां कल घटना घटित हुई थी। बस वहां मैंने जो भी किया वह सब कुछ वही था जो मुझ से कहा गया था। मुझे जैसे ही मेमसाहब की आंखों का इशारा मिला मैंने साहब की छाती में छुरा भोंक दिया। लेकिन मै नौसिखिया गरीब आदमी जिसने कभी किसी की हत्या न की हो, घबड़ा गया और जल्दी से आधा छुरा ही भोंक मेम साहब को ले भागना चाहा। मैंने टैक्सी भी पहले से नहीं मोड़ रखी थी अतएव जब भाग रहा था कराहने की आहट पर एक स्त्री ने यह सब

कुछ देख लिया था और जैसे ही मैंने मोटर भगाना चाहा उसने बड़ा सा पत्थर हमारे शीशे पर फेंक कर मारा। शीशा मेरी आँख में भी लगा और मैं आहत हो गया। मोटर पेड़ से टकरा गई, हम दोनों पकड़ गये। सरकार अब आप ही बतायें इसमें मेरा क्या दोष है? मेरे छोटे छोटे बच्चे हैं, बीबी है, टैक्सी चलाकर पेट पालता हूँ।'-- कह उसने अपनी पतलून की जब से एक सौ का नोट निकाल कर पुलिस के सामने रख दिया और फूट फूटकर रोने लगा।

पुलिस अफसर ने उसका भी नाम पता आदि नोट कर लिया और कांस्टेबिल से उसे ले जाकर पुनः बैरक में बन्द करने को कह दिया और उस नोट को पुलिस के अधिकार में कर लिया। कांस्टेबिल ने उसे ले जाकर बैरक में बन्द कर दिया। वह लाख चिल्लाता और तड़पता रहा किन्तु किसी ने उसकी न सुनी।

इस के बाद वह युवती भी पेश की गई किन्तु उसने किसी भी प्रकार पुलिस को कुछ भी बताने से साफ इनकार कर दिया। यदि कुछ बताया भी तो उत्तर संतोषजनक न था। यद्यपि युवती का पीला चेहरा इस बात की साफ गवाही दे रहा था कि इस हत्या कराने के प्रयास में

उसका भी प्रमुख हाथ था किन्तु फिर भी उसके बयान की आवश्यकता तो थी ही ।

अन्त में पुलिस ने हार कर कहा—'मुझे आपके बयानों से सन्तोष नहीं हुआ आप किसी बातका सही और उचित उत्तर नहीं दे रही है ।'

'मैंने जो कुछ भी बताया है, ठीक है ।'

'मैं कहता हूँ, आपने जो कुछ भी कहा सब गलत है उसका सबूत एक नहीं कई गवाह हैं । उस युवती और टैक्सी ड्राइवर के बयान ने इस बात को पूरी तरह से साफ कर दिया है । वह पुलिस और जनता ने खुद आप को भागने से पकडा था ।'

युवती केवल चुपचाप सब कुछ सुनती रही फिर भी कुछ न बोली ।

'अगर आप पुलिस को सही बयान न देंगी तो हमें आपके प्रति कठोर बनना पड़ेगा । यहाँ नही तो कोर्ट में आपको सब कुछ बताना ही पड़ेगा, आप इस प्रकार पुलिस की हाथ से बच कर नहीं निकल सकतीं ।' अब भी आप को दो तीन दिन का समय दिया जा सकता है, सब पहलुओं पर अच्छी तरह से सोच विचार कर लें । आप कहतीं हैं कि आप उस आदमी को जानती ही नहीं

जिसने उस युवक की हत्या करने के लिये यह षड़यन्त्र रचा था किन्तु फिर कैसे यह सब कुछ हुआ ? ड्राइवरको आप की आँखों का इशारा कैसे मिला ? अगर आपका कोई दोष न था तो आप क्यों कर भागी।'

युवती अन्य कोई उपाय न देख पीड़ा का बहाना कर कराहने लगी। पुलिस ने उसे बैरक मे बन्द कर दिया। स्त्री होनेके कारण उस समय वह उसके साथ और अधिक कठोर होना उचित न समझी। साथ ही साथ टैक्सी ड्राइवर से उस आदमी की हुलिया का पता लगा वह सतर्कता के साथ उस अपराधी का पता लगाने लगी। उसने रात ही में 'न्यू इंगलिश होटल' के उस कमरे पर अपना अधिकार कर लिया था जिसमे ये दोनो ठहरे थे।

पुलिस इस प्रकार पूरी पूरी तहकीकात में लग गई क्योंकि उसे उम्मीद थी कि इस घटना के पीछे किसी बहुत बड़े रहस्य के खुलने की आशा है। वह इसके पूर्व कि मामला कोर्ट में जाये सब कुछ सही सही पता लगा लेना चाहती थी। वह चाहती थी कि उसे हर पहलू का पता लग जाये।

यद्यपि युवती पुलिस को ठीक ठीक बयान नहीं दे रही थी फिर भी उसे उम्मीद थी कि वह सब कुछ पता

लगा ही लेगी। राममोहन के बयान ने मुकदमे में और भी जान डाल दी थी। अब पुलिस को केवल उसी आदमी की खोज थी जिसने टैक्सी ड्राइवर को राममोहन की हत्या करने के लिये तैयार किया था अतएव वह उसी की खोज में लग गई।

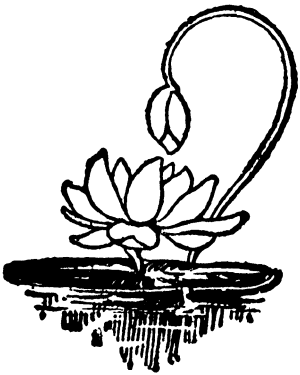

उन्नीस

वास्तव में घटना का रूप इस प्रकार था। राममोहन और सुधा अपने निश्चय के अनुसार कलकत्ते भाग आये थे। सुधा ने यह सब जो कुछ भी जाल रचा था, उससे उसका तात्पर्य राममोहन के रुपये ठगना ही था। अब तक वह जिसे अपना भाई बता रही थी वह वास्तव में उसका कोई भी न था। न तो वह कोई व्यापार करता था न उसे किसी कार्य से बम्बई ही जाना था। दरअसल उनका एक दल था जिसका केवल इतना ही काम था कि वह बड़े-बड़े धनिकों को विभिन्न रूप में फंसा उनकी लम्बी चौड़ी दौलत पर हाथ मारते।

पहले तो सुधा ने ट्रेन पर ही राममोहन के रुपयों को हड़पने का विचार किया किन्तु गाड़ी में भीड़ और सुविधाजनक अवसर प्राप्त न होने के कारण उसे अपना निश्चय बदलना पड़ा। उसने सोचा अब कलकत्ते में ही कुछ करेगी। जिसे अब तक वह अपना भाई बताती आ रही थी वह भी उसकी सहायतार्थ उसके पीछे पीछे लगा हुआ था।

जब उन्होंने देखा कि यहां भी राममोहनकी सतर्कता के कारण उन्हें कोई अवसर हाथ नहीं लग रहा है और पकड जाने की भी आशंका है उन्होने किसी अन्य उपाय को ढूंढ़ निकालने का विचार किया।

उस युवक ने सुधा के सलाह से निश्चय किया कि राममोहन की हत्या कर डालना ही अधिक उचित होगा। इसी अभिप्राय से उसने उस टैक्सी ड्राइवर को इस काम के लिये तैयार किया। राममोहन स्वयम् इतना चालाक था कि वह आसानी से किसी भी प्रकार अन्य के हाथ में नही आता था। उन्होने विचार किया कि राममोहन की हत्या कर वे उसके रुपये ले कहीं भाग जायेंगे और फिर उनका पता भी कौन लगा सकेगा। लेकिन उनका षड़यंत्र असफल रहा और उन्होने जो कुछ भी सोचा था पूरा न हो सका। सम्भव है वे सफल भी हो जाते किन्तु किरण के रास्ते में आ जाने के कारण वे बहुत बड़ी मुसीबत में फंस गये।

पुलिस को किरण के बयान पर पूरा पूरा विश्वास हो चुका था क्योंकि उसकी पुष्टि टैक्सी ड्राइवर के बयान से हो चुकी थी।

इधर जिस दिन से राममोहन को सरकारी अस्पताल में भर्ती कर दिया गया किरण किसी न किसी प्रकार नित्य लुकछिप कर उसे देख आती थी। कई बार तो इच्छा हुई कि वह उसे प्रत्यक्ष रूप से भी देखे किन्तु अनेक कारण-वश उसे अपनी इच्छा को दबाना पड़ा। उसे भय था कि कहीं उसे देख कर राममोहन पर कोई बुरा असर न पड़े जिससे उसके स्वास्थ्य को हानि पहुँचे। इस प्रकार उसके मस्तिष्क पर भी जोर पड़ सकता था। फिर वह नहीं चाहती थी कि राममोहन उसके रहस्य को जान सके, वह अभी उसे छिपाये रखना चाहती थी।

दस बारह दिन में राममोहन पर्याप्त स्वस्थ हो चला था, उसका घाव भरने लगा था और अब उसमें इतनी पीड़ा नहीं रह गयी थी जितनी पहले होती थी।

एक दिन डाक्टर ने मुस्कराते हुए कहा—'मिस्टर राममोहन।'

'जी, डाक्टर साहब।'

'अब तो बहुत शीघ्र ही आप बिलकुल अच्छे हो जायेंगे।'

'यह सब आपकी कृपा का फल है।'

'मेरी कृपा क्या भाई, उस भगवान की दुआ मनाओ जिसने ऐन मौके पर उस स्त्री को भेज दिया था वरना

थोड़ी देर और हो जाने पर तो हालत बड़ी नाजुक हो जाती ।'

'जाने वह कौन देवी है, जिसने मेरे जीवन की रक्षा की है, मेरी उसे देखने की बहुत उत्कट इच्छा है ।' कह वह उस देवी की कल्पना में विभोर हो उठा जिसने उसकी जान बचायी थी ।

जब से उसे मालूम हुआ कि उसके प्राणों की रक्षा किसी नारी ने की है और उसकी हत्या का भी षड़यन्त्र सुधा ने ही रचा था तब से वह विचित्र परिस्थिति में पड़ गया । एक ओर तो उसके सामने नारी का आदर्श इतना ऊँचा उठ जाता कि उसे किसी देवी से कम न मानता और दूसरी ओर उसका हृदय नारी के प्रति घृणा से भर उठता । वह सोचता, यह नारी वर्ग भी कितना गिरा हुआ है ।'

जब कोई काँटा पैर में चुभ जाता है तब कितनी तकलीफ होती है । ऐसा मालूम होता है मानो काँटे मनुष्य को पीड़ा पहुँचाने के लिये ही पैदा होते हैं । काँटों से घृणा हो उठती है और इच्छा होती है कि इन समस्त काँटों को उखाड़ फेंका जाय । उनके प्रति हृदय में घोर उपेक्षा की भावना उत्पन्न हो जाती है ।

लेकिन वही काँटा जब पैर में चुभे किसी चीज को निकालने में सहायता करता है तब ऐसा प्रतीत होता है मानों ईश्वर ने मनुष्य की सहायता के लिये ही प्रत्येक वस्तु का निर्माण किया है। उसके हर वस्तु की शक्ति अनुपम है और प्रकृति की कोई भी देन सारहीन नहीं। तभी तो ये काँटे कितने दुखदायी होने पर भी कभी कभी मनुष्य की कितनी सहायता करते है।

उस समय मनुष्य में जो भावनायें काँटों के लिये उठती है वही भावनाये राममोहन के हृदय में नारी वर्ग के लिये उठ रही थीं। एक ओर तो उसका हृदय नारी के प्रति घृणा से भर उठना और दूसरी ओर उसे नारी दैवी शक्तिसे भी बढ़ कर मालूम होती।

उसने निश्चय किया कि स्वस्थ होते ही सर्वप्रथम उस नारी को देखेगा जिसने उसे जीवन दान दिया है, उसके प्राणों की रक्षा की है। यदि कहीं उस समय वह न होती ? तो क्या ! वह यों ही तडप तड़प कर मर जाता और सुधा उसे यों तड़पता देखकर भी उसके रुपये ले भाग जाती ? कितनी विचित्र है दुनिया। देखने में वह कितनी सुन्दर, सीधी और सरल मालूम होती थी किन्तु

कौन जानता था कि उसके हृदय में इतना कपट भरा होगा।

अब दुनिया काफी बदल गई है, अब किसी की गहराई को उसकी वेश-भूषा, बोल-चाल, रूप-रंग और गुणों से ही नहीं आंका जा सकता। अब तो उसे पहचानने के लिये उसकी प्रत्येक गहराइयों तक घुसना होगा। अब किसी का भी इतमीनान नहीं किया जा सकता। यही सुधा देखने-सुनने, बोल-चाल सभी में कितनी मधुर थी। बिल-कुल साधु मालूम होती थी किन्तु वह एक राक्षसी से भी वीभत्स निकली।

अब उसे ऐसा लग रहा था, जो केवल वाह्य सौन्दर्य पर ही मुग्ध हो अपने को निछावर कर देते हैं उससे बड़ा संसार में कोई मूर्ख नहीं। मनुष्य को शारीरिक सौन्दर्य नहीं, हृदय का सौन्दर्य झाँकना चाहिए। वही वास्तविक सौन्दर्य देखने को मिलेगा।

कुछ ऐसे भी होते हैं जिनका हृदय और रूप दोनों ही सुन्दर होता है। पत्थर को चीर कर बहने वाले निर्झर में जहां पत्थर को फोड़ देने की क्षमता होती है वहां वह कोमल हृदय भी रखता है। निर्झर का हृदय और रूप दोनों ही सुन्दर होता है। जहां उसका जल

इतना अधिक निर्मल और उज्ज्वल होता है वहीं उसमें थके हुए पथिक के हृदय को शान्ति प्रदान करने की क्षमता भी होती है। वही सूर्य किरण जो अपनी प्रखरता से उसके जल को भाप बना कर उड़ाती रहती है उन्हीं से अपने को सजा यह और भी सुन्दर बन जाता है। वही पत्थर जिन पर कितने ही फूल कुम्हला कर पड़े रहते हैं और जिनकी कठोरता लोहे से भी अधिक होती है, उसी की गोद पर निर्भर कितने शांत भाव से बहता रहता है, यही नहीं उसकी खूबसूरती को भी बढ़ाता है। निर्झर का हृदय और रूप दोनों ही उज्ज्वल होता है। यदि उसमें कंकड़ भी फेंक कर मारा जाय तो वह उसे बिना किसी संकोच के अपने हृदय मे स्थान दे देगा। परिस्थिति में परिवर्तन उसे नहीं बदल सकती, वह तो हमेशा एक ही समान यों ही गुनगुनाता बहता रहता है। समय की गति उसके मधुर संगीत को नहीं रोक सकती। उसका स्वभाव और मार्ग स्थिर है, उसमें चपलता होते हुए भी चंचलता नहीं है।

इसी समय नर्स ने नौकर के साथ खाना लाकर उसके सामने रख दिया—'लीजिये खाना खा लीजिये।'

राममोहन ने एक बार नर्स की ओर ध्यान से देखा

और आँखें नीची कर ली। रूप रंग से वह कितनी बद-सूरत और काली मालूम होती है किन्तु हृदय की कितनी मधुर है। दूसरों की सेवा में ही अपना जीवन समर्पित कर चुकी है। तब तक नर्स ने पुनः कहा—

'क्या कुछ तकलीफ ज्यादा मालूम हो रही है, मैं सहारा दे दूं ?'

'जी नहीं !'

'फिर क्या बात है, इतने अनमने से क्यों दीख रहे हैं ?'

'यही सोच रहा हूं कि दूसरों के लिये आपने अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया है। दूसरों के सुख में ही आप को सुख मालूम होता है ?'

'यह तो हमारा फर्ज है, इसमें खूबी की क्या बात ?'

'दूसरों के लिये सब कुछ त्याग देना खूबी नहीं तो और क्या है !'

'अच्छा जाने भी दीजिये हम लोगों को, जैसा जीवन चल रहा है उसमें हमें पूर्ण संतोष है, उसे आप चाहे जो भी समझ लें। लेकिन पहले भोजन कर लें, यह ठण्डा हो रहा है।'—कह उसने सहारा दे राममोहन को उठा दिया। वह भोजन करने लगा।

बीस

अपनी मंजिल के आधे मार्ग पर पहुँच कर दूर की सफर से थकता राही कुछ देर अपनी थकान मिटाने के अभिप्राय से किसी पेड़ की छाया में ठहर अपने पिछले मार्ग और अगले मार्ग पर विचार विनिमय करने लगता है। पथ पर कितने ही मोड़ आते हैं और पथिक उनपर एकाग्र मन से चलता रहता है। वह पथ के किसी भी दूसरे मोड़ पर मुड़ जाने में अपनी मंजिल से कितनी दूर पहुंच जाता है।

हिमालय अपने जीवन पथ पर बढ़ता चला जा रहा है यह सब न उसने कभी सोचा और न सोचने की चेष्टा करता। बस, जब श्रम से थक कर विश्राम करने के अभिप्राय से ठहर जाता, सोचता कि जीवन पथ के जरा से मोड़ पर आ जाने से उसमें कितना परिवर्तन हो गया है। उसके समक्ष पक्ष के छूटे हुये मील के पत्थर उसकी स्मृति में उभर आते।

जब तक मनुष्य के जीवन में कोई उद्देश्य नहीं बन जाता तब तक वह इसी प्रकार भटकता रहता है; ज्यों कोई नाव किसी लहर पर बिना किसी उद्देश्य के छोड़ दी जाय। वह लहरों के साथ इधर उधर भटकती रहती है। मांझी उसकी चाल में किसी प्रकार भी हेर फेर नहीं लाता, किन्तु जब माँझी का कोई उद्देश्य बन जाता है, वह नाव खेकर उसे उसी ओर ले जाता है जहाँ पहुंचने का उसका लक्ष्य है। उस समय कठिन से कठिन आंधी तूफान भी उसके मार्ग का रोड़ा नही बन सकता, चाहे उसे अनेक कष्ट क्यों न उठाने पड़ें, मृत्यु से सामना क्यों न करना पड़े। और यदि वह अपना मार्ग छोड़ वापस लौट आता है तो कायर है। जीवन की कठिनाइयों और लहरों की चपेटों से लड़ते चले जाने में ही सच्ची वीरता का परिचय मिलता है।

यही दशा हिमालय के जीवन नौका की भी थी। जब तक उसके जीवन का कोई उद्देश्य न था, लक्ष्य न था, वह भले ही इधर उधर भटकता रहा हो किन्तु अब तो उसके जीवन के लक्ष्य और उद्देश्य दोनों ही बन चुके थे। अब वह कायरों की भांति अपने पथ से नहीं लौट

सकता था। कभी कभी किरण की स्मृति तूफान बनकर सामने छा भी जाती किन्तु वह उससे विचलित न हो अपनी भावनाओं को दृढ़ किये आगे बढ़ता ही जाता। वह उस पथिक की भांति नहीं था जो मोह को न छोड़ अपने तय किए हुए मंजिल को पुनः लौट जाते हैं। वह उस पथ पर अब पुनः लौट कर नहीं जाना चाहता था जिससे वह अभी होकर आया था।

बहुधा देखा गया है कि प्रेमी अपनी प्रेयसी के न मिलने पर अथवा जीवन की कठिनाइयों से घबड़ा कर आत्म हत्या कर लेते हैं। कहीं भाग जाते हैं। उनसे बड़ा कायर कोई नहीं होता। सच्चा प्रेम तो वही है जो कभी भी किसी रूप में न बदल सके। प्रेम पर समय की मार अथवा कठिनाइयों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। सच्चा प्रेम तो उस दीपक के लौ की भाँति है जो तूफान के झोंके में भी नहीं बुझ पाती। सच्चा प्यार कभी समय के साथ नहीं बदल सकता। जो व्यक्ति अन्त तक प्रेम की ज्वाला को अन्तस्तल में छिपाये अपने जीवन पथ पर बढ़ते जाते है, उन्हें ही सच्चा प्रेमी कहा जा सकता है। प्रेम मनुष्य को मरना नहीं जीना सिखाता है।

हिमालय जितना ही एकान्त में बैठ अपने जीवन की

बीती घटनाओं पर विचार करता उतना ही अधिक अपने को गुत्थियों को उलझा पाता और हृदय की अशान्ति बढ़ती ही जाती। लेकिन वह जितना ही अधिक अपनेको जीवन संग्राम में व्यस्त देखता उतना ही अधिक अपने को निश्चिन्त और सुखी समझता। इसी कारण से वह दिन रात अपने को काम में भुलाये रखने की कोशिश करता। जिस प्रकार शराब के नशे में चूर शराबी अपने को ससार में सबसे अधिक सुखी समझता है उसी प्रकार हिमालय भी अपने व्यस्त जीवन में अपने को बहुत सुखी समझता।

उसने अपने नागरिक जीवन को बहुत ही व्यस्त बना लिया था। प्राय: प्रत्येक सभा सोसायटियों में जाया आया करता। कभी कभी तो विभिन्न परिषदों में उसे अध्यक्ष पद का भी भार ग्रहण करना पड़ता था। अभी अभी कल ही उसे 'इण्टर स्कूल वार्षिक गल्प प्रतियोगिता' में सभापति का पद ग्रहण करना पड़ा था। जिस समय उसने अध्यक्ष पद से भाषण देने के पश्चात् अपना निर्णय सुनाया, शामियाने में भरी खचाखच जनता ने करतल ध्वनि से उसका स्वागत किया था। उसके निर्णय पर ही सर्वश्रेष्ठ वक्ता को इक्यावन रुपये का पुरस्कार मिलने को था। सभी को विश्वास था कि हिमालय

का निर्णय सर्वश्रेष्ठ वक्ता के लिये ही होगा और वही हुआ भी। पुरस्कार एक अत्यन्त मैले कुचैले तेरह वर्षीय निर्धन बालक को मिला जिसकी आत्मा में से साक्षात् सरस्वती झाँक रही थीं। बड़े बड़े धनिकों के लड़के रह गये यद्यपि उन्हें रुपयों की नहीं नाम की इच्छा थी।

हिमालय सोच रहा था, वह बालक कितनी प्रखर बुद्धि का था परन्तु साधन विहीन होने के कारण शायद ही कुछ अधिक पढ़ लिख सके। अधिक से अधिक इन्ट्रेंस पास कर लेने के बाद कहीं चालीस रुपये पर क्लर्क हो जायेगा और उसके गुणों का विकास बस वहीं तक हो पायेगा। और ये धनिक के लड़के मन्द बुद्धि के होने पर भी एम० ए०, बी० ए०, आई० सी० एस० हो जायेंगे और कितनों पर हुकूमत करेंगे। उस दरिद्र बालक की बुद्धि और इन धनिकों की बुद्धि में कोई समानता नहीं। कैसा विचित्र विधान है! तैराक डूब जाता है और जो तैरना नहीं जानता वह पार लग जाता है। मानव जीवन में धन का कितना महत्वपूर्ण स्थान है।

उसी समय उसका ध्यान सामने के एक बँगले के उद्यान की ओर गया। एक गुलाब का पेड़ और उसमें

दो रंग के गुलाब। एक गुलाबी और दूसरा सफेद। किन्तु यह प्रकृति का नियम नहीं मानव का ही नियम है जो एक गुलाब के पेड़ में दो रंग के फूल पैदा करता है। प्रकृति तो एक गुलाब में एक ही रंग के फूल खिलाती है। इसमें प्रकृति का नहीं मानव का दोष है जो समान चीजों में भी अन्तर पैदा कर देता है। वह इन्हीं विचारों की गहराइयों में उतरा रहा था कि इसी समय रामेश्वर जी ने उसके ध्यान को भंग करते हुए कहा—

'दार्शनिक महोदय क्या सोच रहे हैं?'

'जी कुछ भी नहीं?'—हिमालय ने चौंक कर कहा।

आप के नाम सम्मन आया है!'

'सम्मन!'

'जी, सम्मन!'

'मेरे नाम किस बात का सम्मन होगा?'

'शायद गवाही देनी है।'

'कहां से आया है?'

'कलकत्ते से!'—कह रामेश्वर जी ने सम्मन उसके हाथ में दे दिया। हिमालय ने उसे पढ़कर कहा—'यह तो किसी हत्या के षड़यन्त्र में गवाही देने का सम्मन मालूम होता है, पर इससे मेरा क्या सरोकार?'

'आश्चर्य तो मुझे भी है, किन्तु इसमें चिन्ता की क्या बात। सम्भव है जो यहां हत्या हुई थी उसी से सम्बन्ध रखने वाली कोई घटना हो।'

हिमालय ने कुछ सोचकर कहा—'तो कलकत्ते जाना होगा, लेकिन यह तो यहां की पुलिस द्वारा आया है।'

'हो सकता है कलकत्ते की पुलिस ने यहां की पुलिस को लिखा हो!'

'वहां की पुलिस को कैसे पता लगा होगा कि मैं यहां हूं?'

'पुलिस को क्या नहीं मालूम रहता, खैर चलो कोतवाली चलें वहीं सब कुछ पता लग जायेगा।'

हिमालय और रामेश्वर जी उसी समय कोतवाली के लिये रवाना हो गये। जिस समय वह कोतवाली पहुंचे फाटक पर ही कोतवाल साहब मिल गये, उन्होंने उनका स्वागत किया और दफ्तर में ले गये—'आज मेरे अहोभाग्य हैं जो आपके दर्शन हुए, कहिये मैं आप की क्या सेवा कर सकता हूं?'

'यह सम्मन हिमालय के नाम आया है, कुछ समझ में नहीं आता कि कलकत्ते में इन्हें कैसी गवाही देने

जाना है।'—कह रामेश्वर जी ने सम्मन कोतवाल साहब के हाथ में दे दिया।

कोतवाल साहब उसे कुछ देर तक गौर से देखते रहे और कुछ सोचने के बाद एकदम से बोल पड़े—'ओह, यह है! कलकत्ते में किसी स्त्री ने किसी पुरुष की हत्या करने का षड्यन्त्र रचा था, किन्तु वह पकड़ गयी है। वहाँ के पुलिस की एक चिट्ठी हमारे यहां आयी थी, उसे सन्देह हो गया है कि वह वही स्त्री है जिसने यहां सेठ टोलामल की हत्या कराई थी, सो उसके बारे में यहां से लिख दिया गया था कि आप ही उसे पहचान सकते हैं। इसीलिये आप के पास सम्मन आया है कि आप उस स्त्री को देखकर बता सकें कि वह वही स्त्री है अथवा कोई अन्य।'

'बस इतनी सी बात।'—रामेश्वर जी ने कहा।

'मैं तो समझा अबकी कोई बड़ी मुसीबत आ गई।' हिमालय ने कहा और तीनों व्यक्ति खिलखिला कर हंस पड़े।

'पुलिस भी खूब जानकारी रखती है साहब! भला बताइये कहां कलकत्ता और कहां इटारसी!'—'रामेश्वर जी ने कहा।

'साहब महकमा ही ऐसा है, यहां छोटी छोटी जानकारी भी रखनी पड़ती है। यह क्या है, मामूली से गांव का रहने वाला आदमी अगर मद्रास भी पहुंच जाये तो अधिक दिन तक पुलिस की आँखों से नहीं बच सकता फिर आप तो बड़े आदमी हैं।—' कह वह पुनः मुस्करा पड़े। 'अच्छी बात है, तो अब चलें !'—रामेश्वर जी ने कुर्सी से उठते हुए कहा। 'ओ साहब पानवान तो खा जाइये।'—कह उन्होंने घण्टी बजाई और एक पुलिस वाला सलाम कर सामने खड़ा हो गया।

'पान ले आवो।'—कह कोतवाल साहब पुनः बातचीत करने लगे।

'जब से आप आयें हैं, आप का अखबार खूब चमक उठा है।—'वह हिमालय की ओर देख कर बोले।

'आपके यहां आता है पत्र ?'—हिमालय ने प्रश्न किया।

'आता है ! आपने भी खूब कहा। मेरे बीबी बच्चों को बिना आपका अखबार पढ़े चैन नहीं मिलता इसलिये थाने की प्रति के साथ साथ एक और प्रति खरीदनी पड़ती है।

'आप खरीदते भी हैं ?'—रामेश्वर जी ने कहा।

'और नहीं तो क्या साहब।'

'वाह आपने पहले ही क्यों नहीं कहा, मै कल से ही आपके पास नित्य एक प्रति भेजने का प्रबन्ध करूंगा।'

'ऐसे ही सब जगह भेजने लगियेगा तो साहब घाटा हो जायगा।'

'होने भी दीजिये घाटा।' रामेश्वर जी ने कहा और फिर तीनों व्यक्ति खिलखिला कर हँस पड़े। तब तक सिपाही पान लेकर आ गया और पान खाने के बाद रामेश्वर जी और हिमालय कोतवाल साहब से बिदा ले कार्यालय वापस लौट आये। कोतवाल साहब ने उन्हें अपनी पुलिस लारी से ही उनके घर तक छुड़वा दिया।

'तो कब जाना है कलकत्ते ?' रामेश्वर जी ने प्रश्न किया।

'चौदह तारीख को पहुँचना है।'

'आज कौन सी तारीख है ?'

'आठ !' हिमालय ने सामने लगे हुए कैलेण्डर की ओर देखते हुए कहा।

'तो कब जाओगे ?'

'बारह तक रवाना होऊँगा।'

'वहाँ ठहरोगे कहाँ ?'

'किसी होटल म ठहर जाऊंगा।'

'होटल में क्यों ठहरोगे, कलकत्ता ऐसी नगरी में कहां भटकोगे ? कभी गये हो कलकत्ते ?'

'जी नहीं !'

'तब तो बड़ी परेशानी होगी। मैं आज ही अपने एक मित्र को पत्र लिखे देता हूँ, वह स्टेशन पर आकर तुम्हें अपने यहाँ ले जायेंगे, वहीं उनके साथ ठहरना। पत्र भी ग्यारह तक तो जरूर ही मिल जायगा, बल्कि एक्स-प्रेस डेलिवरी भेज देता हूँ।'

'किन्तु समय बहुत थोड़ा है, सम्मन भी बड़ी देर से आया है।'

'हां, वह तो है ही, किन्तु अब तो जाना ही होगा और जैसे भी हो प्रबन्ध करना ही पड़ेगा।' रामेश्वर जी ने कहा।

'किन्तु वह पहचानेंगे कैसे ?'

'पूरी हुलिया जो लिखी रहेगी ? कहो तो तुम्हारी एक तस्बीर भी रख दूँ ।' कह हँसते हुए रामेश्वर जी अपने कमरे में चले गए और वहाँ बैठ अपने मित्र को पत्र लिखने लगे ।

हिमालय सोच रहा था, वह जन्म भर रामेश्वर जी से उऋण नही हो सकता ।

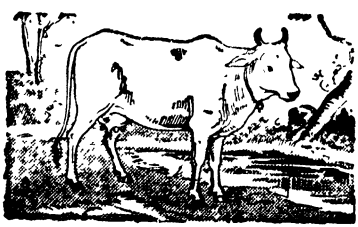

इक्कीस

एक दिन पूर्णिमा की माँ ने किरण से पूछा, 'क्यों किरण, अब कैसी हालत है ?'

'अब तो करीब करीब बिलकुल ठीक हो चले है ?'

'किरण, एक बात सोचती हूँ।'

'कौन सी ?'

'यही कि तू फिर से अपने पति मे मिल जा।'

'ना!'

'क्यों ?'

'अब किस मुँह से उनके सामने जाऊँ। मैं तो सबके लिए मर चुकी हूँ।'

'जिस प्रकार उनका दूसरा जीवन हुआ है उसी प्रकार तुम्हारा भी दूसरा जीवन हो सकता है।'

'नहीं, अब तो किसी के सामने नहीं जाऊँगी। हृदय पर पत्थर रख जैसा जीवन चल रहा है उसी में सन्तोष करूँगी।'

'लेकिन इस प्रकार कब तक छिप सकोगी ?'

'जब तक अपने को छिपा सकने में समर्थ हो सकूँ।'

'लेकिन जब कोर्ट में उनसे सामना पड़ेगा तब क्या वह तुम्हें पहचान न लेंगे ?'

'मैं कोर्ट में जाऊँगी ही नहीं।'

'सरकारी आज्ञा का उल्लंघन करोगी ?'

'करना ही पड़ेगा।'

'किन्तु इससे नहीं बच सकती, हम लोग भी विपत्ति में पड़ सकते हैं। पुलिस को तुम्हारे भागने पर सन्देह हो सकता है।'

'तो कोर्ट में जाना ही होगा ?'

'और नहीं तो क्या !'

'तो फिर जाऊँगी।'

'यदि कहीं वह तुम्हें पहचान गये तब ?'

'तब क्या आत्मसमर्पण कर दूँगी, चाहे ठुकरायें या अपनायें।'

मुझे भी तुम्हारा विचार पसन्द है।'

'यदि उन्होंने पहचान कर भी न अपनाया और दुनिया जान गई कि किरण मरी नहीं ज़िन्दा है, तब ?

'तब क्या, दुनिया राममोहन की बुराई करेगी। वह कहेगी, जिसने सदैव पति को अपनाया, पति को पुनः जीवन दान दिया उसने उसे केवलमात्र चेचक निकलने के कारण कुरूप हो जाने पर ठुकरा दिया। वह मनुष्य नहीं राक्षस है।

किरण मौन बैठी सब कुछ सुनती रही और किसी विचारधारा में निमग्न हो गयी। तब तक पूर्णिमा की मां ने पुनः उसका ध्यान भंग करते हुए कहा—'क्यों किरण पति के घर जाकर हमें भूल तो नहीं जाओगी ?'

'कैसी बात करती हैं आप ? आपने मुझे आश्रय दिया, आपने मुझे उस समय सहारा दिया जब कि मेरा कोई भी न था, आप ही ने मुझे संसार में भटकने से बचाया और मैं आपको भूल जाऊँगी। इतना कृतघ्न अधम से अधम भी नहीं हो सकता। लेकिन वह मुझे नहीं अपनायेंगे, शायद मुझे अपनी आंख से भी देखना पसन्द न करें।'

'दिल इतना छोटा करने से काम नहीं चलता। ऐसी अवस्था में कठोर से कठोर हृदय भी पिघल जाता है।'

'पर मुझे विश्वास नहीं होता ।'

'समय पर विश्वास हो जायगा ।'

'कुछ समझ में नहीं आता क्या करू ?'

'समझ में क्यों नहीं आता । मन को चंचल न कर स्थिर करना चाहिये और संसार में आगे बढ़ने के लिये मनुष्य को अपना सहारा खोजना ही चाहिये । बिना किसी अवलम्ब के मनुष्य के लिये आगे बढ़ना उतना ही कठिन होता है जितना एक बेल के लिये बिना किसी दीवाल के । फिर अब तुम्हें सहारा ढूंढ़ने की क्या आवश्यकता है । तुम्हें तो समाज ने स्वयम् एक सहारा दे दिया है । देखो जब कोइ लता दीवार के सहारे ऊंचे वढ़ जाती है तब उसकी और उसके फूलों की शोभा कितनी अधिक हो जाती है अन्यथा वह जमीन पर पड़ी यों ही कुचलती रहती है और उसे कोई पूछता तक नहीं ।'

'आप ठीक कहती है कि मनुष्य को उत्थान पथ पर अग्रसर होने के लिये अवलम्ब की आवश्यकता होती है, किन्तु यदि वह सचमुच मेरे लिये सहारा होते तो मुझे इस प्रकार क्यों भटकना पड़ता ।'

'कभी कभी लता भी हवा के झोंके में दीवार की

निठुरता से घबड़ा उसका अवलम्ब छोड़ झूलने लगती है किन्तु शीघ्र ही पुनः दीवाल का अवलम्ब पकड़ लेती है।'

'ये सब दार्शनिक बाते है।'

'ये दार्शनिक बातें नही है और यदि है भी तो क्या? दार्शनिक मूर्ख तो होते नही, उनमें असीम प्रतिभा होती है।'

'लेकिन लता तो खूबसूरत होती है तभी दीवार उसे सहारा देती है।'

'शायद यह भूलती हो कि उसी के सहारे काटेदार बेलें भी बढ़ती है।'

'किन्तु दीवार की सुन्दरता, सुन्दर लता को ही आश्रय देने में बढ़ती है।'

'लेकिन दीवार की रक्षा काँटेदार बेलों से ही होती है।'

'तो क्या अपने जीवन में वह मुझे रक्षक के रूप में रखेंगे?'

'यदि उस रूप में भी रखें तो कोई बुराई नहीं है। अपनी छाया में पनपने तो देगे। यदि किसी नारी को अपने पति के लिये यह गौरव प्राप्त हो तो यह कोई साधारण बात नहीं है।'

'लेकिन कुरूप से लोग घृणा क्यों करते हैं ?'

'क्योंकि वह उसका अन्तस्तल नहीं झांक पाते, कुरूपता की दीवार पूर्व में ही उन्हें आगे बढ़ने से रोक देती है और वे वापस लौट जाते हैं। यदि कहीं एक बार भी वह आगे बढ़ उसका अन्तस्तल झांक पाते तो फिर केवल उसी से घृणा करते जिसका हृदय भी कुरूप है।'

'लेकिन यह सब दर्शनशास्त्र की ऊंची बाते है।'

'फिर तुम दार्शनिकों पर आ पहुंची। ये दर्शनशास्त्र की बातें नहीं है बल्कि ये इन्द्रियों की शिथिलता अथवा दृढ़ता के कारण ही उत्पन्न होती हैं।'

'लेकिन मैं अपने स्वाभिमान पर ठेस लगते नही देख सकती। जिस कारण मैंने अनेक कष्ट सहे, घर छोड़ा, आत्महत्या का झूठा प्रपंच रचा अब उसी को पुनः अपना लूं यह कभी नहीं हो सकता। मै उनके आगे कभी आश्रय की भीख नहीं माँग सकती।'

'तुम्हें आश्रय की भीख माँगनी नहीं, देनी पड़ेगी।'

'वे इतने सरल नहीं हैं।'

'समय आने पर तुम स्वयं सब कुछ देख लोगी। मुझे तुम से अधिक संसार का अनभव है। मुझमें मनोभावों को पढ़ने की तुमसे अधिक क्षमता है क्योंकि

मैंने संसार का तुम से अधिक अनुभव किया है। यह सब चीजें केवल पढने से ही नहीं जानी जा सकतीं। विशेषत: युवावस्था मे जब कि युवक, युवतियों का रक्त बहुत गर्म रहता है, वे रक्त क गर्मी की जोश में क्या कर रहे है इसका उन्हे ध्यान नही रहता।'

अच्छी बात है मै कोर्ट में जाऊंगी और यदि उन्होंने आश्रय दिया तो मुझे कभी भी इनकार न होगा।'

'यदि उन्होंने स्वयम् चलने को न कहा ?'

'तब मै कभी आत्मसमर्पण नहीं करूंगी।'

'तो क्या करोगी ?'

'हृदय की आग को दबाये इसी प्रकार बापस लौट आऊंगी।'

'कितनी दृढ़ निश्चयी हो तुम !' कह पूर्णिमा की मां जोरों से हँस पड़ी। किरण किसी गम्भीर चिन्ता में खो गयी।

———

बाइस

राममोहन, युवती तथा टैक्सी ड्राइवर के स्वस्थ होते ही कोर्ट में बराबर मुकदमा चल रहा था । युवा और टैक्सी ड्राइवर दोनों ही एक युवक की हत्या के अपराध में रंगे हाथों पकड़े गये थे । यद्यपि वे राममोहन की हत्या नहीं कर पाये किन्तु फिर भी अपराध हत्या करने का ही लगा था । पुलिस उन पर केस चला रही थी । पुलिस सभी ज़रूरी तहकीकात राममोहन से कर चुकी थी और उसकी पुष्टि टैक्सी ड्राइवर के बयान से हो चुकी थी ।

घटना कोई साधारण न थी, इसके भीतर कोई गूढ़ रहस्य छिपा था इसीलिये पुलिस इस केस में इतनी अधिक सतर्कता तथा परिश्रम से काम कर रही थी । उसे सन्देह हो गया कि यह कोई पहली घटना नही है, इसके पूर्व भी अनेक इसी प्रकार की घटनायें घटित हुई होंगी और अवश्य ही इस युवती का कोई दल है जो रुपये वालों को इसी प्रकार अपने चंगुल में फँसा उनके धन का अपहरण करता है । उसके पास और भी पिछली कई रिपोर्टें

इस प्रकार की आ चुकी थीं किन्तु फिर भी अभी तक वास्तविक अपराधी का पता न लग सका था। उसे पूरी उम्मीद थी कि इस बार वह अवश्य ही किसी बड़ी चीज का पता लगा सकेगी।

पुलिस ने उसी रात को राममोहन के उस कमरे पर जिस होटल में राममोहन ठहरा था, अपना अधिकार कर लिया। उसने राममोहन के कैशबाक्स को खोल कर देखा तो उसमें साढ़े पांच हजार रुपये नकद निकले। अब उसे पूरी उम्मीद हो गई कि यह जो हत्या करने की कोशिश की गई थी इन्हीं रुपयों के लिये थी।

टैक्सी ड्राइवर ने जिस युवक का हवाला दिया था वह भी उनके हाथ आ गया। षडयंत्र का रूप इस प्रकार था, सुधा और टैक्सी ड्राइवर राममोहन की हत्या कर शीघ्र ही होटल वापस लौट आयेंगे। वहां पर वह युवक उनकी प्रतीक्षा करता रहेगा। होटल से सुधा राममोहन का कैशबाक्स ले उसके साथ उसी रात तुरन्त भाग खड़ी होगी। प्रातः होने तक जब कहीं हत्या का समाचार फैलेगा तब तक यहाँ से वे जाने कितनी दूर होंगे। फिर किसी को कुछ पता भी कैसे लग सकेगा।

वह युवक होटल के पास बड़ी देर से सुधा की

प्रतीक्षा कर रहा था, अब काफी देर हो चली थी, लगभग बारह बज गये किन्तु फिर भी वह अभी तक लौट कर नहीं आई थी। उसे कुछ सन्देह सा होने लगा—कहीं वे अपने षड़यन्त्र में असफल तो नही हुए, पकड़ तो नहीं गये। सुधा अकेले ही हत्या करने गई थी और ऐसा उसके लिये प्रथम अवसर था जब वह किसी को साथ न ले गई हो। उसने सोचा, हो सकता है अब तक उन्हें कोई उपयुक्त अवसर न मिला हो इसीलिये देर हो रही हो। अन्त में उसने निश्चय किया कि उसे अभी थोड़ी देर तक और प्रतीक्षा कर लेनी चाहिये।

जब वह सुधा की प्रतीक्षा में उस वीरान होती हुई सड़क पर इधर उधर टहल रहा था तभी जाकर पुलिस ने एकाएक उस स्थान को चारो तरफ से घेर लिया। अपने को पुलिस से घिरा देख वह कुछ घबड़ा सा गया और सन्देहात्मक स्थिति में भागता हुआ पकड़ा गया।

पुलिस को अक्षरशः विश्वास हो गया, यह वही व्यक्ति है जिसके विषय में टैक्सी ड्राइवर ने थाने में बताया था। उसे गिरफ्तार कर थाने ले जाया गया। टैक्सी ड्राइवर ने उसे देखते ही चिल्ला कर कहा—'हाँ यह वही है, इसी साहब ने मुझे नोट का लालच देकर

खून करने को कहा था। इसी ने हमारे बच्चों को मुझसे अलग किया है, इसे मत छोड़िये, यही वह डाकू है।'

पुलिस ने कड़ककर उससे पूछा—'क्यों आपने इस ड्राइवर से हत्या करने के लिये नहीं कहा था ?

'जी, जी, नहीं, नहीं, वह झूठ बोलता है !'

'आप इन महिला को पहचानते हैं ?'

'जी, नहीं, नहीं, मैं इन्हें नहीं जानता !'

'आप झूठ बोलते है।'—पुलिस अफसर ने और भी कड़ा होते हुए कहा।

'जी, नही ! मैंने कुछ नहीं किया है।'

'आपका नाम ?'

'जी !'

'प्रेमकान्त।'—उसने कुछ रुकते हुए कहा।

'आप फिर झूठ बोलते हैं ?'

इस प्रकार पुलिस ने सुधा और उस युवक से अनेक प्रश्न किया किन्तु उसे कोई सन्तोषजनक उत्तर न मिला। इस प्रकार उसका सन्देह और भी बढ़ गया। वह समझ गई वे अपने रहस्य को छिपाये रखना चाहते हैं। अब वह और भी तत्परता के साथ इस साधारण सी घटना के पीछे हाथ धोकर पड़ गई। वे सब जेल में बन्द कर दिये

गये। यहाँ की पुलिस के पास इटारसी में एक महिला द्वारा एक सेठ की हत्या की रिपोर्ट भी थी। उसे कुछ सन्देह सा हुआ कि यह महिला उसी हत्या से सम्बन्धित है इसीलिये उसने वहाँ की पुलिस को लिख कर उस व्यक्ति के विषय में पूछा जो उस षड़यन्त्र में फंस कर मुक्त हो चुका था।

वह उस व्यक्ति से केवल इतना जानना चाहती थी कि क्या वह इन दोनों में से किसी को पहचानता है! यद्यपि न्यायालय को भी अब अधिक सफाई की आवश्यकता नहीं थी फिर भी उसने पुलिस की इस बात पर अपनी सहमति प्रकट की। इस प्रकार केस और भी सुन्दर और स्पष्ट हो सकता था। अतएव पुलिस ने हिमालय को भी निर्णय के दिन कोर्ट मे उपस्थित होने के लिये लिख भेजा।

कोर्ट को किरण पर पूरा पूरा विश्वास था अतएव वह उसकी वीरता पर मुग्ध हो उसे कुछ पुरस्कार देना चाहती थी इसलिये उसने उसे भी निर्णय के दिन कोर्ट में उपस्थित होने का आदेश लिख भेजा।

यों तो राममोहन से सभी बातें पूछ ली गई थीं किन्तु फिर भी निर्णय के दिन कोर्ट चाहती थी कि वह

भी उपस्थित रहे, सम्भव है उसके किसी प्रश्न की पुनः आवश्यकता पड़े। राममोहन अब इस योग्य हो चुका था कि वह भी कोर्ट में उपस्थित हो सके। राममोहन स्वयम् उत्सुक था कि वह कोर्ट में उस महिला को देख सके जिसने उसकी जिन्दगी बचाई थी।

पुलिस अपना केस भलीभाँति समझ चुकी थी किन्तु फिर भी छोटी-मोटी चीजों की खोज में वह अभी तक लगी थी।

न्यायालय में सुधा, टैक्सी ड्राइवर और वह युवक तीनों ही पेश किये जाते थे। कोर्ट सुधा और युवक से अनेक प्रश्न करती किन्तु सभी का उसे गोलमटोल उत्तर मिलता। टैक्सी ड्राइवर की अधीरता तथा अपने बाल बच्चों के मोह ने समस्त घटना का सच्चा स्वरूप रख दिया था। वह बराबर कोर्ट में रो रो कर कहता, उसे छोड़ दिया जाय, वह निर्धन है, उसके बाल बच्चे हैं। उसने यह सब कुछ पैसे की लालच में इन दोनो के कहने पर ही किया है। कोर्ट ने भी जान लिया कि ड्राइवर जो कुछ भी कह रहा है सच है, उसने राममोहन को मारना चाहा किन्तु अपनी क्रिया मे दक्ष न होने के कारण घबड़ा

गया और इसी कारण मोटर मोड़ कर भागना चाहा अन्यथा यदि पहले से ही मोटर मोड़ कर रखता तो सीधे भाग सकता था। उसने कभी किसी की हत्या नहीं की थी तभी छुरे का पूरा हाथ भी उचित स्थान पर न बैठ सका और वह घबड़ा गया। पुलिस के एक डांट में ही उसने सम्पूर्ण घटना को उसी प्रकार उगल दिया।

न्याय की प्राय: सभी प्रणालियां पूरी हो चुकी थी, बस अब हिमालय द्वारा उस युवती और युवक की पुष्टि तथा राममोहन और किरण की उपस्थिति के बाद ही तुरन्त वह अपना निर्णय देना चाहती थी।

और दिनों की अपेक्षा आज कोर्ट में कुछ अधिक भीड़ थी क्योंकि आज निर्णय होने को था। लोगों को निर्णय सुनने की इतनी अधिक उत्सुकता न थी जितना उस युवती को देखने की जिसने राममोहन की जान बचायी थी। राममोहन भी आज बहुत उत्सुक था, वह आज उस युवती को देखना चाहता था जिसने उसे जीवनदान दिया था वरन उसे लुटने से भी बचाया। अपनी जिन्दगी को खतरे में डाल उसकी जिन्दगी बचानी चाही। यद्यपि उसका घाव पूरी तरह से नहीं

भरा था फिर भी इस दो मास की अवधिमे उसने अपने खोये रक्त का पर्याप्त अंश प्राप्त कर लिया था। अब वह ठीक से चल फिर भी सकता था। डाक्टरों ने भी उसे अब चलने फिरने की पूरी अनुमति दे दी थी।

जिस समय हिमालय निश्चित दिन पर हावड़ा जंकशन में उतरा उसकी आँखें चकाचौध हो उठी। इतना बड़ा स्टेशन, इतनी बड़ी भीड़ उसमे वह कहाँ से उन व्यक्ति को ढूढ़ पाता जो उसे लेने के लिये स्टेशन पर आने को थे। यद्यपि रामेश्वर जी ने अपने मित्र की पूरी पूरी हुलिया बता दी थी फिर भी वह उन्हे न ढूंढ़ सका। उधर रामेश्वर जी के मित्र भी डब्बा डब्बा छान आये किन्तु हिमालय का पता न लगा। धीरे धीरे प्लेटफार्म की भीड़ कम होने लगी थी तभी अकस्मात दोनों ने एक दूसरे को थक स्थान पर पहचान लिया। हिमालय तो सोच रहा था कि यदि कहीं वह न मिले तो वह इतने बड़े शहर मे कहां भटकता फिरेगा, कहाँ जायेगा ? उसे कहाँ ठौर ठिकाना मिल सकेगा ? शहर जितने ही बड़े होते हैं उनमें उतनी ही स्थान की कमी हो जाती है, तभी तो वे बड़े भी होते हैं। पर हृदय जितना ही अधिक बड़ा होता

है उसमें उतने ही अधिक स्थान की रिक्तता बढ़ जाती है।

रामेश्वर जी के मित्र हिमालय को पा अति हर्षित हुए—

'मैंने प्रत्येक डिब्बा खोज डाला, लेकिन आपका पता न लगा।'

'मैं भी आपको खोजने में लग गया था।'

दोनों एक दूसरे को खोजने लगे तभी कोई किसी को न मिला।'—कह वह जोर से हँस पड़े।

आपने मुझे पहचाना कैसे ?'—हिमालय ने प्रश्न किया।

'जिस प्रकार आपने मुझे।'—और पुनः वह हँस पड़े।

'तो आइये फिर चला जाय।'—कह वह एक कुली पर हिमालय का सामान लदवाने लगे। उन्होंने हिमालय की खूब खातिर की। दो दिन के शेष समय में हिमालय ने कलकत्ते की समस्त प्रमुख चीजें देख डालीं। उसे ऐसा लगा जैसे कलकत्ते का उसी प्रकार कोई छोर नहीं है जिस प्रकार किसी करोड़पती के धन का छोर नहीं होता।

कोर्ट में समय के पूर्व से ही जमाव होने लगा था। राममोहन भी उन्हीं दर्शकों में से था जो समय से बहुत

पूर्व आ जाते हैं। ठीक ग्यारह बजे कोर्ट की कार्यवाही प्रारम्भ हुई, तीनों मुजरिम पेश किये गये। राममोहन ने सुधा को देखा, उसका रूप कितना भयावना मालूम हो रहा था। उसने घृणा से आँखें फेर लीं। जज ने युवती से प्रश्न किया—

'तुम्हारा नाम सुधा है ?'

'जी।'

'तुमने कोर्ट और पुलिस को अपना कोई भी हवाला ठीक से नहीं दिया है। न तो तुम अपने भाता पिता का नाम बताती हो, न अपने किसी सम्बन्धी का और इस आदमी को भी पहचानने से साफ इनकार करती हो। कोर्ट की निगाह में यही आदमी सबसे बड़ा मुजरिम है। टैक्सी ड्राइवर का कहना है वह तुम्हें जानता है और तुम भी इसे जानती हो।'

'वह झूठ बोलता है, इन्हें मैं जानती ही नहीं। इन्हें कभी देखा तक नहीं।'—सुधा ने उस युवक की ओर देख कर कहा।

'तुम भी अपना पता ठिकाना ठीक ठीक नहीं बता पा रहे हो इससे साफ मालूम होता है कि तुम्हारा इस

षड़यन्त्र में सबसे बड़ा हाथ है। क्या तुम मिस सुधा को बिलकुल नही जानते ?'

'जी नही !'

'कभी देखा भी नहीं है ?'

'जी नही !'

'तो क्या इस टैक्सी ड्राइवर ने जो कुछ भी कहा है वह सब झूठ है ?'

'जी !'

'नहीं हजूर मैंने जो कुछ भी कहा है सब बिलकुल ठीक है, मेरा कोई अपराध नही है। आपके दर्बार में झूठ भी कैसे बोल सकता हूँ।'—कह टैक्सी ड्राइवर बीच में ही रो पड़ा।

'खामोश ! इटारसी से आये आदमी को पेश किया जाय।'—जज ने मेज पर हाथ पटकते हुए कहा। थोड़ी ही देर में कोर्ट का आदमी हिमालय के साथ कोर्ट मे हाजिर हो गया। किरण अभी तक कोर्ट में नहीं आई थी, वह जानबूझ कर कुछ देर मे ही वहाँ आना चाहती थी। वह नहीं चाहती थी कि मुकदमें के पूर्व ही राममोहन उसे पहचान जाय।

'आप ही श्री हिमालय हैं ?'—जज ने प्रश्न किया ।

'जी हाँ !'—हिमालय ने नीची नजर किये कहा ।

'क्या आप इस युवती और आदमी को पहचानते है ?'—कह जज ने सुधा और उसके साथी की ओर इशारा कर दिया ।

हिमालय कुछ देर तक निश्चल खड़ा रहा किन्तु तुरन्त ही उस युवती और युवक को देख कुछ चौंक सा पड़ा । वह युवक और युवती भी उसे देख कुछ सहम से गये ।

अरे, यह तो वही है जो मुझे ट्रेन पर मिली थी । जो मुझसे फिल्म में गीत लिखने के लिये कह रही थी । यह आदमी भी कुछ जाना पहचाना सा मालूम पड़ता है । यह तो वही है जो मेरे बगल में आकर बैठ गया था । वह कुछ देर तक कुछ सोचता रहा ।

जज ने पुनः प्रश्न किया—'क्या आप इन्हें जानते हैं ?'

'जी, कुछ कुछ पहचान रहा हूँ ।'

'आप बता सकते हैं आपने इन्हें कहाँ देखा है, कैसें जानते हैं ?'

मेरी इनकी मुलाकात लखनऊ से बम्बई जाते समय हुई थी। इन्होंने मुझसे तो कहा था बम्बई जा रहे हैं किन्तु इटारसी स्टेशन के पहले ही उतर गये थे।

'और कुछ बता सकते है आप इनके विषय में ?'

'जिस सेठ की उस रात्रि हत्या हुई उससे आप लोग फिल्म निर्माण सम्बन्धी वार्तालाप कर रहे थे।'

बस ठीक है, आपका पूरा पूरा बयान मेरे पास है उसे दोहराने की कोई आवश्यकता नहीं है। वह मेरे पास इटारसी से आ चुका है।'

'अच्छी बात है।'

'आप इन दोनो व्यक्तियों को खूब अच्छी तरह पहचान गये ?'

'जी इन्हें मै अच्छी तरह पहचान रहा हूँ। ये दोनो वही है।'

'आप क्या इनका नाम बता सकते हैं ?'—जज ने सुधा की ओर संकेत करके प्रश्न किया।

'जी, उस समय आपने अपना नाम मिस मोहना फिल्म स्टार बताया था।'

'कहिये मिस मोहना ;,—कह जज ने सुधा की ओर देखा। उसने अपनी आँखें नीची कर लीं।

'इसे आप पहचानते हैं ?'—टैक्सी ड्राइवर की ओर देख कर जज ने प्रश्न किया।

'जी नहीं, शायद पहली बार ही देख रहा हूँ।'—हिमालय ने कहा।

'हाँ सरकार, मैं निर्दोष हूँ। मुझे छोड़ दें।'—कह टैक्सी ड्राइवर पुनः रो पड़ा।

'कहिये अब आपको कुछ कहना है मिस सुधा ?' जज ने प्रश्न किया।

'नहीं, अब मुझे कुछ भी नहीं कहना है। हम दोषी हैं, हमने धन के लिये कितनों की ही जान ली है। कितने निरपराधियों को हमारे कारण दण्ड भोगना पड़ा है। अब मैं अन्तिम समय अपने बचने का झूठा प्रयास कर न तो कानून की आँख में धूल झोंकना चाहती हूँ न अपनी आत्मा के साथ विश्वासघात करना चाहती हूँ। पुलिस ने जो कुछ भी पता लगाया है, ठीक है। हमने ही सेठ टोलामल की हत्या की थी, उसके धन का अपहरण किया था। मुझे मेरे अपराधों का पूरा पूरा दण्ड

मिलना चाहिये।' कह सुधा रो पड़ी। उस युवक ने भी आँखें नीची कर लीं।

'आपको कुछ कहना है ?'—जज ने युवक से पूछा।

'जी नहीं।'

'आपको अपने अपराध स्वीकार है ?'

'जी।'

जज ने फैसला लिखते हुए कहा—'इसके पहले कि कोर्ट अपना फैसला सुनाये, वह उस युवती को इनाम देना चाहती है जिसने राममोहन के जान को रक्षा ही नहीं की वरन एक ऐसे बड़े षड़यन्त्र के पता लगाने में सहायता की है जिसके पीछे पुलिस बहुत दिनों से परेशान थी। उस युवती को इज्जत के साथ कोर्ट में पेश किया जाय।'

थोड़ी ही देर में पुलिस के पीछे पीछे एक युवती ने कोर्ट में प्रवेश किया, उसकी आँखें जमीन पर झुकी थीं। कोर्ट में बिलकुल सन्नाटा छा गया। दर्शक युवती का मुख देखने की इच्छा रख भी उसे नहीं देख पा रहे थे।

जज ने कहा—'मिस किरण को उनकी वीरता और हिम्मत से खुश हो सरकार पाँच सौ रुपये नकद के इनाम

की घोषणा करती है जिसे वह कल सरकारी खजाने से पा सकती है। आज उनके कारण एक बहुत ही महत्वपूर्ण षड्यंत्र का पता लगा है अतएव कोर्ट उन्हें बारबार धन्यवाद भी देती है।

अब कोर्ट मुजरिमों के बारे में अपना निर्णय सुनाती है।

मिस सुधा जो विभिन्न नामों से परिचित हैं और उनके साथी को बीस वर्ष के कालेपानी की सजा दी जाती है। यदि वह अपने दल का पूरा पूरा पता बता देंगे तो सजा घटकर दस साल की हो सकती है। टैक्सी ड्राइवर को आठ महीने का कठिन कारावास दिया जाता है। अब कोर्ट की कार्यवाही समाप्त होती है।'

तेइस

धीरे धीरे कोर्ट की भीड़ खिसकने लगी, केवल दो चार इने गिने लोग रह गये थे, वे भी जा रहे थे। परिस्थिति में अद्‌भुत लचीलापन होता है, हर रोज, हर घंटे, प्रत्येक क्षण नयी परिस्थितियां पैदा होती है। राममोहन और हिमालय एक बार किरण का नाम सुन कर स्तब्ध से हो गये।

कहीं यह वही किरण तो नही है ? राममोहन की किरण तो मर चुकी थी किन्तु हिमालय की किरण अभी जिन्दा थी। कभी कभी मनुष्य को परिस्थितियों को समझने में काफी देर लग जाती है। अक्सर देखा गया हैं कि उसे उसको समझने के लिये एक मिनट से भी कम वक्त मिलता है।

राममोहन और हिमालय ने देखा वह स्त्री धीरे धीरे सबसे बाद में जा रही है। राममोहन दौड़कर उसके पैरों पर गिर पड़ा। किरण ने उसे उठा अपने हृदय में छिपाते हुए कहा—'स्वामी !'

'कौन किरण ?'

'हां !'

'किरण तुम अभी जिन्दा हो ?' राममोहन ने किरण को गौर से देखते हुए कहा।'

'जी, आपकी किरण मरी नहीं।'

'किरण, अब तो मुझे छोड़ कर कहीं नहीं जावोगी ?'—कह राममोहन उससे पुनः लिपट गया।

'नहीं, अब कहीं नहीं जाऊँगी !'

'मैं आदमी नहीं राक्षस हूँ।'

'नहीं, ऐसा न कहें।'—कहते कहते किरण की आँखों से गंगा जमुना बह चली। उसने उसी आँखों से देखा, उसकी ओर बढ़ते बढ़ते किसी के पैर ठिठक गये थे।

'हिमालय !'

किन्तु वह मूर्ति यों ही अचल खड़ी रही। किरण राममोहन को छोड़ उसकी ओर भागी किन्तु धीरे धीरे वह काया बाहर खिसकने लगी।

'किरण कहाँ ?'—कह राममोहन ने दौड़ कर उसे पकड़ लिया।

'मुझे छोड़ दो !'

'क्यों ?'

'वह जा रहा है ।'

'कौन ?'—कह राममोहन ने इधर उधर देखा किन्तु तब तक वह मूर्ति जा चुकी थी । किरण ने अपने को सम्हाल लिया । उसने देखा जिस मार्ग से वह गया था उस धूल से भरी जमीन पर उसकी आँखों से गिरी पानी की बूंदे आशीर्वाद के फूल सी बिखर कुम्हला रही थीं । वह दौड़ कर दरवाजे पर आई देखा कोई सर नीचा किये मौन चला जा रहा था । वह मूर्छित हो राममोहन के अंक में समा गई ।

हिमालय एक अनन्त पथ के राही के समान चला जा रहा था । किधर जा रहा था कहाँ जा रहा था, यह उसे स्वयम् न ज्ञात था । किरण जहाँ भी रहे सुखी रहे, उसका सुहाग अचल रहे । उसने जिसे स्वामी कहा था वह उसे सदैव सुखी रखे बस यही उसका आशीर्वाद था ।

उसे ऐसा लगा जैसे वह कुछ देर के लिये अपने पथ से विचलित हो गया हो किन्तु तुरन्त ही उसके कर्त्तव्य ने उसे सजग कर दिया—'भावना से कर्त्तव्य ऊँचा है ।'

मनुष्य की खूबसूरती कर्तव्य पालन करने में है, जजबातों की तरंगों में गोता खाने में नहीं ।

——

—डा[illegible]ो नाय—